पत्रों के आईने में

स्वामी दयानंद सरस्वती

संपादक

राज बुद्धिराजा

पत्रों के आईने में : स्वामी दयानंद सरस्वती

स्वामी दयानंद अपने व्यस्त जीवन में से कुछ पल निकालकर पत्र लिखा करते थे। वे एक साथ कई काम किया करते थे—विभिन्न धर्मों में फैली कुरीतियों का खंडन, गंभीर दार्शनिक ग्रंथों की रचना, शास्त्रार्थ की तैयारी। भ्रमण और यात्रा के दौरान नाना प्रकार की पीड़ाओं को झेलने के बाद वे पत्र लिखने बैठ जाया करते थे। पत्रों के आईने में स्वामीजी के कई रूपों को देखा जा सकता है।

स्वामीजी ने देश के विभिन्न प्रांतों के अपने सहयोगियों से पत्र-व्यवहार किया है। उन्होंने लाहौर, रावलपिंडी, अमृतसर, दिल्ली, लखनऊ, सहारनपुर, मेरठ, जोधपुर, बरेली, पुष्कर, अजमेर, जयपुर, कानपुर, उदयपुर, लुधियाना से पत्र लिखे। उन पत्रों का उद्देश्य वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार करना था। उन दिनों स्वामीजी दो-तीन दिनों के अंतराल से पत्र लिखा करते थे। पत्र प्राप्त होने पर उनका उत्तर भी तत्काल दे दिया करते थे।

इस पुस्तक में उनका एक व्याख्यान सम्मिलित किया गया है, जो उन्होंने यज्ञ की संपूर्ण प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए दिया था। यज्ञ-वेदी, पात्र, साकल्य, घृत व अन्य द्रव्यों को प्रातःकाल विशिष्ट प्रकार की समिधाग्नि में दहन करने से व्यक्ति स्वस्थ, दीर्घायु होता है। उन्होंने निर्देश दिया है कि व्यक्ति को प्रातः-सायं नित्यप्रति यज्ञ करना चाहिए।

इस पुस्तक में उन स्थानों, तिथियों और व्यक्तियों का भी उल्लेख है, जिनसे स्वामीजी ने शास्त्रार्थ किया था। इसके अतिरिक्त उन छापेखानों, स्थानों का भी उल्लेख है, जहाँ से स्वामीजी का संपूर्ण वाङ्मय प्रकाशित हुआ था।

ISBN—81-88121-19-3

मूल्य : रु० 150.00
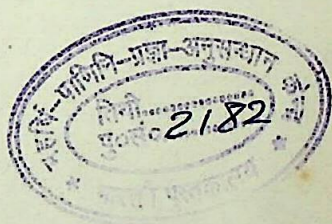
पत्रों के आईने में

स्वामी दयानंद सरस्वती

परमेश्वरी प्रकाशन

दिल्ली
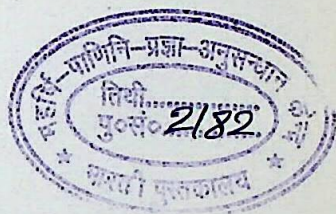
पत्रों के आईने में

स्वामी दयानंद सरस्वती

संपादन

राज बुद्धिराजा

ISBN—81-88121-19-3

प्रकाशक
परमेश्वरी प्रकाशन
बी-109, प्रीत विहार
दिल्ली-110092

प्रथम संस्करण
2003

आवरण
रवि शर्मा

मूल्य
एक सौ पचास रुपये

मुद्रक
एस०एन० प्रिंटर्स
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

PATRON KE AAEENE MEIN
SWAMI DAYANAND SARASWATI (Hindi)
Ed. by Raj Buddhiraja
Price : Rs. 150.00
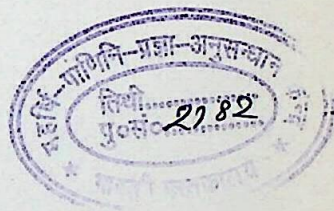
अनुज दर्शन कुमार कुकरेजा अग्निहोत्री,
अनुजा सरोजबाला कुकरेजा अग्निहोत्री
के लिए

पत्रों के आईने में

महर्षि दयानंद सरस्वती और आर्यसमाज एक-दूसरे का पर्याय बन चुके हैं। मेरे लिए वे पर्याय से भी ज्यादा हैं। वे एक साथ ही, समाज-सुधारक, शिक्षाविद्, भाषाविद् और साहित्यकार हैं। उनके साहित्यकार रूप की ओर किसी भी इतिहासकार का ध्यान नहीं गया। 'शंखनाद' लिखते समय मैंने महर्षि के इसी रूप को उभारने की चेष्टा की थी। यात्रा करते समय स्वामी जी के कुछ पत्र मेरे हाथ लग गए। ये पत्र उन्हीं के हाथ के लिखे हुए हैं। मैंने इस पुस्तक में सर्वप्रथम स्वामी दयानंद सरस्वती द्वारा हस्तलिखित पत्र दिए हैं और बाद में मुद्रित पत्र। ये पत्र सन् 1876 से 1883 तक लिखे गए हैं। जैसे-जैसे मैं पत्रों को पढ़ती गई, मुझमें उनके साहित्य के प्रति रुचि बढ़ती गई।

जिन विद्वानों ने उनके पत्रों पर शोध-कार्य किया है, उनमें से तीन मेरे गुरु हैं—पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु जी, पं० भगवत् दत्त जी और पं० युधिष्ठिर मीमांसक जी। 1952 में जब मैं पद्म-विभूषण पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु जी के पास संस्कृत का अध्ययन करने के लिए काशी गई तो मैंने उनके पास स्वामी जी के पत्र देखे थे। 1959 ई० में पं० भगवत् दत्त जी के पास स्वामी जी के कुछ पत्र और देखे थे। भगवत् दत्त जी ने मुझे व्यावहारिक ज्ञान की शिक्षा दी थी। पं० युधिष्ठिर मीमांसक जी ने स्वामी जी के कुछ पत्रों को एकत्रित करने का प्रयास किया था। मीमांसक जी, जिज्ञासु जी के शिष्य थे। जब मैं अष्टाध्यायी के सूक्त भूल जाती थी तो वे मेरी सहायता करते थे। इस नाते वे मेरे गुरु थे। इन सभी पत्रों में स्वामी जी का व्यवस्थित जीवन और अनुशासन दिखाई देता है।

स्वामी जी ने अपनी जिंदगी के कुछ पन्नों को अपनी ही कलम से कोरे कागजों पर उतारा है अर्थात् उन्होंने अपनी जिंदगी के महत्त्वपूर्ण हिस्से को लिपिबद्ध किया है। इस पुस्तक में उनकी जीवनी, यज्ञ पर एक व्याख्यान और उनके द्वारा किए गए शास्त्रार्थ की तिथियाँ भी दी गई हैं। आशा करती हूँ कि इस कृति का आर्य जगत् में सम्मान होगा। इन्हीं शब्दों के साथ, सस्नेह।

जी-233, प्रीत विहार
दिल्ली-110092

राज बुद्धिराजा
अध्यक्ष
भारत-जापान सांस्कृतिक परिषद्

अनुक्रम

पत्र-लेखन
साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण विधा

पत्र-लेखन साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण विधा है, जो आज लुप्त हो चुकी है। यह विधा विश्व-भर की सभ्यताओं, संस्कृतियों, रीति-रिवाजों और मानवीय रिश्तों को एक सूत्र में पिरोती है। यह दो हृदयों को एक साथ जोड़ती है। यही कारण है कि कभी कपोतों के गुलाबी पाँवों में पत्र बाँधे जाते थे और कभी घुड़सवार इन पत्रों को गंतव्य तक पहुँचाते थे। वास्तव में ही पत्र दिल की गहराइयों से निकलकर दूसरे दिलों की गहराइयों तक पहुँचते हैं। इन पत्रों में गाँव, कस्बा, परिवार, उत्सव, मौसम, भोर-साँझ सब कुछ सम्मिलित रहते हैं।

स्वामी दयानंद अपने व्यस्त जीवन में से कुछ पल निकालकर पत्र लिखा करते थे। वे एक साथ कई काम किया करते थे। विभिन्न धर्मों में फैली कुरीतियों का खंडन, गंभीर दार्शनिक ग्रंथों की रचना, शास्त्रार्थ की तैयारी, भ्रमण और यात्रा के दौरान नाना प्रकार की पीड़ाओं को झेलने के बाद वे पत्र लिखने बैठ जाया करते थे। पत्रों के आईने में स्वामीजी के कई रूपों को देखा जा सकता है। एक कठोर अनुशासक तो थे ही, व्यवहार-कुशल भी थे। उन्हें आयुर्वेद की भी अच्छी जानकारी थी। यदि वे अपने सहयोगियों सुंदरलालजी को पत्र लिखते समय उन्हें नाम से संबोधित कर 'आनंदित रहो' का आशीर्वाद देते थे, तो जोधपुर के महाराजा प्रतापसिंह को पत्र लिखते समय वैसी ही भाषा का प्रयोग करते थे। स्पष्टवादी होने के साथ-साथ वे व्यवहारकुशल भी थे। जोधपुर के महाराजा प्रतापसिंह को किए गए संबोधन अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। वे लिखते हैं—श्रीयुत माननीयवर महाराजे श्री प्रतापसिंहजी ! इस पत्र को पढ़कर ऐसा लगता है कि उन्हें खान-पान के बारे में विशद् जानकारी थी। समय पर उचित भोजन, उचित मात्रा में न लेने

से कई प्रकार के रोग हो जाते हैं। वे स्पष्ट शब्दों में महाराजा और बाबा साहब को रोगी कहते हुए नहीं हिचकिचाते। वे यह भी कहते हैं कि राजा को पूर्णरूपेण स्वस्थ होना ही चाहिए, क्योंकि उसे अपनी प्रजा की रक्षा करनी है। स्वामीजी का मानना है कि शुद्ध एवं सात्त्विक भोजन लेने से व्यक्ति स्वस्थ और दीर्घायु होता है। इससे जान पड़ता है कि स्वामीजी अपने स्वास्थ्य का बखूबी ध्यान रखते थे। उन्हें मिस्री मिश्रित दूध और आम बहुत पसंद थे। इसी पत्र में वे महाराज को शास्त्रार्थ में पूरे समय उपस्थित रहने के लिए कहते हैं। उनका कहना उनकी आज्ञा है।

'भारतमित्र' के संपादक को लिखे गए पत्र में उनसे ललकारते हुए कहते हैं कि उनके विरोध में जो टिप्पणी समाचार-पत्र में प्रकाशित की गई है, वह आपत्तिजनक है। यदि लेखक में साहस है तो सामने आकर शास्त्रार्थ करे। ओजपूर्ण शैली होते हुए भी उसमें जिस तरह की शिष्टता-शालीनता है, वह केवल स्वामी दयानंदजी में ही हो सकती है। इसका कारण है कि उन्होंने न केवल वैदिक आर्यधर्म का अध्ययन किया था, बल्कि विविध धर्मों का भी गहराई से अध्ययन किया था।

वे अपने मित्र माधोलालजी को लिखते हैं कि अपने समान सबको समझना चाहिए और दूसरों का हित करना चाहिए। यदि सभी एक-दूसरे का हित करेंगे तो हमारा यह आर्यावर्त हर प्रकार ताप-शाप से मुक्त हो जाएगा।

इन पत्रों को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि वे राजा-महाराजाओं और धनाढ्य सेठों के बाग-बगीचों में रहा करते थे। वे प्रकृति-प्रेमी थे और नगर के कोलाहल से दूर रहा करते थे। शुद्ध-स्वच्छ हवा, निर्मल पानी, खुले आकाश की छत के नीचे स्वामीजी का वज्रासन, प्राणायाम और ध्यान। इनकी शास्त्रार्थ स्थलियाँ भी बगीचियाँ हुआ करती थीं। अक्खड़ और घुमक्कड़ स्वामीजी के दिल के भीतर दया और प्रेम की गंगा-यमुना बहा करती थी। जीवन के अंतिम और कटु सत्य मृत्यु-उपरांत रामानंद ब्रह्मचारी की माता के अंतिम-संस्कार के लिए वे आर्यसमाज के मंत्री लाला कालीचरण को आदेश देते हैं कि उनका मृतक-कर्म 'संस्कार-विधि' में दिए गए विधान के अनुसार किया जाए और इस कर्म में किसी भी प्रकार का आलस्य नहीं किया जाए। चंदन, घृत और दूसरे साकल्य पर होने वाला खर्चा मेरे हिसाब

में डाल दिया जाए। कितना बड़ा दिल होगा स्वामीजी का ! यदि एक ओर वे राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिंद' को ललकारते हैं, तो दूसरी ओर असहाय वृद्धा के लिए द्रवीभूत हो जाते हैं। गृह-त्याग करते समय किशोर मूलशंकर ने अपनी माँ को तो छोड़ दिया, लेकिन भ्रमण करते समय जिस निराश्रित माँ के लिए वे पसीज उठते हैं, शायद उनके दिल की बावड़ियों से नेह का झरना फूटता होगा।

स्वामीजी ने देश के विभिन्न प्रांतों से अपने सहयोगियों से पत्र-व्यवहार किया है। उन्होंने लाहौर, रावलपिंडी, अमृतसर, दिल्ली, लखनऊ, सहारनपुर, मेरठ, जोधपुर, बरेली, पुष्कर, अजमेर, जयपुर, कानपुर, उदयपुर, लुधियाना से पत्र लिखे। उन पत्रों का उद्देश्य वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार करना था। जब डाक-व्यवस्था सुचारु नहीं थी, उन दिनों ये दो-तीन दिनों के अंतराल से पत्र लिखा करते थे। पत्र प्राप्त होने पर उनका उत्तर भी तत्काल दे दिया करते थे। जिस व्यवस्थित शैली में स्वामीजी ने पत्र-लेखन विधा को समृद्ध किया, वैसा शायद ही किसी ने किया हो। इन पत्रों में एक निश्चित उद्देश्य दिखाई देता है, वो है—आर्यावर्त, आर्यभाषा, वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार। यूँ तो साहित्यिक जगत् के कई लेखकों ने पत्र-व्यवहार किया है, जिनमें पंडित सुमित्रानंदन पंत और डॉ० हरिवंशराय 'बच्चन' का पत्र-व्यवहार बहुचर्चित रहा। 'बच्चन के नाम पंत के सौ पत्र' में जिन पत्रों को सम्मिलित किया गया है उनमें पारिवारिक एवं सामाजिक बातों का जिक्र है। इन निजी बातों को सार्वजनिक बनाना खतरा मोल लेना है। लेकिन स्वामीजी के सामने एक ही उद्देश्य था, वो था—असत्य के स्थान पर सत्य की स्थापना।

इन पत्रों से विदित होता है कि स्वामीजी सम्मान से सिर ऊँचा करके चलते थे। शास्त्रार्थ करने के लिए पंडितों को ललकारते थे। जिन दिनों छापेखाने नहीं हुआ करते थे, उन्हीं दिनों स्वामीजी लगभग सभी वेदों के पाँच-पाँच सौ मंत्र लिखकर भारत के विशिष्ट स्थानों में बँटवाया करते थे। अपनी अनूठी योजना के अंतर्गत पत्रों की यात्रा के साथ-साथ ये खुद भी यात्रा किया करते थे।

जब केशवचंद्र सेन और ईश्वरचंद्र विद्यासागर ने स्वामीजी से अंग्रेजी पढ़ने-सीखने के लिए कहा, क्योंकि वो चाहते थे कि इनके विचारों का प्रचार

विदेशों में भी हो। लेकिन मना करने के बावजूद स्वामीजी ने अंग्रेजी भाषा का अध्ययन किया और अत्यंत शुद्ध भाषा में पत्र-व्यवहार भी किया। इस पुस्तक में इनके कुछ अंग्रेजी के पत्र सम्मिलित किए गए हैं। पत्र तो अंग्रेजी में हैं, लेकिन हस्ताक्षर हिंदी में। पोस्टमास्टर को लिखा गया पत्र विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जिसमें उन्होंने लिखा है कि बंबई से भेजी गई 'संस्कार-विधि' की 500 प्रतियाँ, जो उन्हें अब तक प्राप्त नहीं हुई हैं, शीघ्रातिशीघ्र उन्हें भेजी जाएँ।

स्वामीजी को यह अनुमान रहता था कि एक स्थान से दूसरे स्थान तक पत्र पहुँचने में कितना समय लगता है। यदि इन्हें पत्र नहीं मिलता था, तो उस डाकघर पर (पोस्टमास्टर) नालिश करने के लिए तैयार हो जाते थे। किसी-किसी पत्र पर डाकघर की मोहर भी है। इससे विदित होता है कि वे पत्रों की प्रतिलिपियाँ भी अपने पास रखा करते थे। स्वामीजी का पत्र-लेखन अद्भुत विचारधारा का प्रतीक है। वह योजनाबद्ध है। वे हिसाब-किताब के मामले में बहुत ही जागरूक थे। इन पत्रों से यह भी जाहिर होता है कि स्वामीजी अपने लेखन के अलावा पत्र-लेखन नियमित रूप से किया करते थे। उस जमाने में ये बहुभाषाविद् उन साथियों की खोज में लगे रहते थे जो उनके साथ नियमित रूप से कार्य कर सकें। इस कार्य के लिए वे उन्हें बीस से तीस रुपए तक मासिक दिया करते थे। ये सभी पत्र देश की धरोहर हैं। उनको सुरक्षित रखना उतना ही परमधर्म है, जितना वेदों को पढ़ना-पढ़ाना और वेदों को कहना-सुनाना।

इस पुस्तक में उनका एक व्याख्यान सम्मिलित कर लिया गया है, जो उन्होंने यज्ञ की संपूर्ण प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए दिया था। यज्ञ-वेदी, पात्र, साकल्य, घृत व अन्य द्रव्यों को प्रातःकाल विशिष्ट प्रकार की सम्मिधाग्नि में दहन करने से व्यक्ति स्वस्थ, दीर्घायु होता है। उन्होंने निर्देश दिया है कि व्यक्ति को प्रातः-सायं नित्यप्रति यज्ञ करना चाहिए।

इस पुस्तक में मैंने उन स्थानों, तिथियों और व्यक्तियों का भी उल्लेख कर दिया है, जिनसे स्वामीजी ने शास्त्रार्थ किया था। इसके अतिरिक्त उन छापेखानों, स्थानों का भी उल्लेख है, जहाँ से स्वामीजी का संपूर्ण वाङ्मय प्रकाशित हुआ था।

अंत में, यह उल्लेख करना चाहूँगी कि स्वामी दयानंद सरस्वती की स्वलिखित संक्षिप्त जीवनी को देखने से मालूम पड़ता है कि आरंभ में उन्होंने मोटी कलम से लिखा और उसका अंत पतली और बारीक कलम से किया। विश्व-साहित्य में हस्तलेखन की समृद्ध परंपरा रही है। विख्यात वैज्ञानिकों, दार्शनिकों, मनीषियों, भाषाविदों और अन्य साहित्यकारों का हस्तलेखन विश्व के प्रसिद्ध पुस्तकालयों में सुरक्षित है। यहाँ मैं यह भी बताना चाहूँगी कि मेरे हस्तलिखित ग्रंथ 'कबीर वाणी', 'मीरा वाणी' और 'रेत का टीला' टोक्यो विश्वविद्यालय, टोक्यो (जापान) में सुरक्षित हैं। यह भी सर्वविदित है कि गंगोत्री की यात्रा करते समय महात्मा अनंत स्वामी सरस्वती भोज-पत्रों पर पत्र लिखकर अपने शिष्यों को भेजते थे। मुझे नहीं मालूम कि उनके शिष्यों ने उन पत्रों को किस रूप में सँभालकर रखा है। मैं आशा करती हूँ कि यह पुस्तक सभी के लिए लाभप्रद होगी।

—राज बुद्धिराजा

स्वामीजी के हस्तलिखित पत्र

(हिन्दी)

स्वस्तिश्री मच्छ्रेष्ठोपमायुक्तेभ्यः श्रीयुत पण्डित
सुन्दरलाल हरनारायण शर्मादिभ्यो दयानन्द
सरस्वती स्वामिन आशिषो भूयासुस्तमाम्।
शमत्रास्ति तत्र भवदीयं च नित्यमाशास्महे।
आगे हम दिल्ली में अजमेरे दरवाजे गरुगज्माजी के कप
र सेरामपद्म के बाग में ठहरे हैं पण्डित गंगा के पास जो चि
ट्ठी का पारसल हमारे नाम से आई हो सो इस ठिका
ने भेजि देना और सबसे आशीर्वाद कहि देना
और पुस्तक जो तने ... संस्कारविधि का केशव
लाल निर्भयराम भेजे तो उनको अपने पास र
खकर रसीद उनके पास भेजि देना और दिन
१५ दिन लगभग हम रहेंगे अग्रे किं पौष बदी ५
बुधे सं १९३३

पंडित रामनारायण जी आनंद
रहो।

[ता०] १५ मार्च को हमने एक चिट्ठी आप
[के पा]स मुलतान् से भेजी थी। उसमें यह
[लिखा] था कि ५० पचास संस्कारविधि
[लाला] वल्लभदास जी के पास लाहौर
[भे]ज दीजिये। परंतु आज की मिती
[तक] न तो पुस्तकें पहुंची और न उत्तर
[हमा]री चिट्ठी का आया। मालूम नहीं कि
उक्त पत्र आपके पास पहुंचा वा नहीं।
जो न पहुंचा हो तो इस पत्र के देखते ही
(५०) पचास पुस्तकें संस्कारविधि की
और (५०) पचास पुस्तकें आर्य्याभि-
विनय के पास लाला वल्लभदास खजानची
आर्य्यसमाज लाहौर के नाम शीघ्र भेज
दीजिये। विलंब न हो। क्योंकि यहां पुस्तकें
नहीं रहीं और लोग बहुत मांगते हैं। हमारे
पास एक पत्र [बम्बई के कोशाध्यक्ष का]

मिति फाल्गुण कृष्ण ५ सम्वत १८३४ वि॰
का लिखा हुआ आर्याभिविनय पहुंचा। उस के देखने से मालूम हुआ
कि आपके चचा पंडित सुन्दर लालजी [के]
नाम एक पार्सल पुस्तकों का कि [जिस]
में १०० सौ पुस्तक आर्याभिविनय
कुछ और २ पुस्तकें भी थीं भेजा [गया था]
सो जो उक्त पारसल आया हो तो
लिखिये कि उसमें कौन २ पुस्तकें और २
कितनी २ थीं। उसी पार्सल में से हमारे
लिये आर्याभिविनय लाला वल्लभ
दासजी के पास भेज दीजिये। अर्थात्
कुल्ल पुस्तक संस्कारविधि ५० पचास
" " आर्याभिविनय - ५० पचास
- - - - - - सब एक सौ पुस्तकें १०० भेजिये।
आगे मुलतान में भी आर्यसमाज होगया।
और ता॰ ११ वी अप्रेल को हम लाहौर में आगये
कुछ दिन यहां ठहर कर पूर्व को लौटेंगे। पंडित
सुन्दर लालजी से हमारा आशीरवाद कहना।
ता॰ १२ अप्रेल सन् १८७८ ई॰ —

· द॰ दयानन्द स॰ स्वामी

२०७०

पंडित सुंदरलाल रामनारायण जी आनंद रहो

विदित हो कि हम तीन हुंडी ५१७।।) की आपके पास भेजते हैं, जिनमें ४००) की एक १००) की दूसरी १७।।) की तीसरी है, जल्दी रसीद हमारे पास भेज दो, और चार पांच दिन में लाज़रस के हिसाब के कागज़ भी तुम्हारे पास भेजते हैं जब दूसरी चिट्ठी लिखेंगे तो वहां जाकर हिसाब किताब कर लेना, हम बहुत प्रसन्न हैं॥

शं भवतु॥ शुभमस्तु॥

दयानन्द सरस्वती
अमृतसर

ज्ये० शु० १३ सं० १९३५

तारीख़ १३ जून १८७८ ई०

२०१८

पंडितसुंदरलालरामनारायणजी प्रसन्न रहो

कल एक चिट्ठी तुम्हारे पास लिखी गई कल हुंडी

की रजिस्टरी कराकर भेजते हैं हुंडीका ब्योरा

इस प्रकार है कि ३००) की १००) की १००) की

और १७॥) की ॥ कुल ४ हुंडी हैं जिसमें हुंडी

३००) और १००) की पता है कि, सीताराम

काशीराम के उपर गोपीनाथ गोकुलचंद्र की

ओर से रक्खे स्वामी दयानंदसरस्वती मि० ज्ये०

शु० १४ सं० १९३५ दिन २२ पीछे धनी रूपये लेने

चाहे सो ई कलदारसो तुम्हारे पहुंचेगी ॥

हम बहुत आनंद से हैं ॥

दयानन्दसरस्वती

ज्ये० शु० १४—३५ अमृतसर

नं०१०२ १

पंडित सुंदरलाल रामनारायण जी आनंद रहो

विदित हो कि हम चार सूचीपत्र तुम्हारे पास भेजते हैं जिनका विवेचन यह है कि पहिले में यह लिखा है कि लाज़रस के यहां कितनी संध्या भाष्य हमारी बाकी हैं, दूसरी पृथक् २ हिसाब प्रत्येक अंक की है, तीसरी में हिसाब लाज़रस के रुपये का है॥ सो अब आप काशी जाकर उनसे हिसाब समझले ना ये हिसाब के कागज़ तो अपने पास रखना उनके कागज़ भी देखलेना हमने उन्हीं के लिखे प्रमाण हिसाब भेजते हैं और उनसे कह देना कि इसमें २०॥।=) वे भी शामिल हैं जो मीमो भेजने के पीछे १३) ज्वालाप्रसाद ने, ४।=) राजकृष्ण मुकुरजी ने, तथा ४॥) पं० जयनारायण वाजपेई ने, भेजे हैं॥ और प्रत्येक अंक अच्छी प्रकार से गिन २ सिंभाल लेना, उनको हुंडी और रुपये दे देना, वा तो जितने वहां जाओगे रुपये बाकी तुम्हारे पास भेज देवेंगे वा दस पंद्रह दिन पीछे भेज देवेंगे॥ सो रुपया लाज़रस का १३४६-)॥ पाई, देना है जिसमें ५४०=)- बाबत पंचमहायज्ञविधि की और ८०५॥।=) बाबत वेदभाष्य की है॥ और पुस्तकें मीमो के अनुसार भली भांति सिंभाल लेना॥ और उनसे कह देना कि स्वामी जी ने दो बार लिखे कि विज्ञापन पत्र का भी मीमो भेज दो सो क्यों नहीं नहीं भेजा इसका क्या कारण है और लाज़रस साहब से पूछकर जो विज्ञापनपत्र हों सो भी ले लेना॥

लाज़रस से पूछ देखना कि मुंशी सरजूप्रसाद ने १००) की हुंडी उनके पास भेज दी वा नहीं॥

बाकी रुपया अपने पास से देना हम बहुत जल्दी भेज देवेंगे

और चौथा सूचीपत्र उन पुस्तकों का पुस्तकों का है कि जो काशी में
व्रजभूषणदासजी के यहाँ नयी सड़क पर चौक के पास रक्खी हैं जब
काशीजा ओ उनसे भी सूची के अनुसार सब पुस्तक लेते आना
और उनके पास भी चिट्ठी भेजते हैं वे तुमको दे देवेंगे सब सिंभाल
कर लेलेना और हम बहुत आनंद से हैं॥

दयानन्दसरस्वती

आ० ७ सं० १९३५

अमृतसर

ता० २२ जून १८७८ ई०

The memo of the Ved Bhashya Bhumika that how many copies are in hand of Lazuras

-	Number	No. 1	No. 2	No. 3	No. 4	No. 5	No. 6	No. 7	No. 8	No. 9	No. 10	No. 11	No. 12	No. 13	No. 14
Printed	3500	3100	3100	3100	3100	3100	3100	3100	3100	3100	3100	3100	3100	3100	3100
Sent to Subscribers	972	988	992	1061	1118	1121	1206	1204	1101	1091	1091	1099	1114	981	986
Cash sold	13	10	7	7	10	7	7	6	6	1	6	6	1	1	
	985	998	999	1068	1128	1128	1213	1210	1107	1098	1097	1105	1115	982	986
	2515	2102	2101	2032	1972	1972	1887	1890	1993	2002	2003	1995	1985	2118	2114
returned & refused	1	1	1	1	1	1	7	6	4	3	2	3	1	5	13
	2516	2103	2102	2033	1973	1973	1894	1896	1997	2005	2005	1998	1986	2126	2127
Sent to Swamiji	196	131	145	50	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2	2
In hand	2320	1972	1957	1983	1971	1981	1892	1894	1995	2003	2003	1996	1984	2124	2125

दयानन्दसरस्वती

सूची उन पुस्तकों की जो काशी में व्रजभूषणदासजी के यहाँ रक्खी है

संख्या पुस्तक	नाम पुस्तक
=	जिल्द महाभारत की जिसमें ४ भारत की ४ सूची की॥
१	वैशेषिकदर्शन
१	आश्वलायन गृह्यसूत्र
१	विषयवाद
१	मुक्तावली
१	कारिकावली॥
१	महाभाष्य ३ जिल्द
१	जागदीशी
४	सूचीपुस्तक
१	उपनिषत् गुजराती अक्षरों में
१	सांख्यप्रवचनभाष्य
१	पातंजलयोगशास्त्र

संख्या	नाम पुस्तक
१	वेदोक्तधर्म्मप्रकाशक
१	व्यामोहविद्रावण
१	छान्दोग्योपनिषत्
१०	मीमांसादर्शन
१	भूगोलहस्तामलक
२	मनुस्मृतिः॥
१	दीधितिः जागदीशी॥

दयानन्दसरस्वती

न० १२३.

१

पंडित सुंदरलाल रामनारायणजी आनंद हो

विदित हो कि आपके पास तीन वा चार जगह से हुंडी पहुंचने वाली हैं जब कोई हुंडी पहुंचे तो हमको इत्तला दे देना, अब आप यह लिखें कि ठाकुर भूपालसिंह वासि ग्राम ऐरव परगना मोर्थल ज़िले अलीगढ़ ने आपके पास ३४) की हुंडी भेजी वा नहीं इसका शीघ्र जवाब भेज देना, और जब आप बनारस को जावें तो हमें लिखना और हम सब प्रकार से आनंद हैं ॥

दयानन्द सरस्वती

२७ जू० १८७८

अमृतसर

नं० ३०

१

पंडित सुंदरलाल राम नारायण जी आनंद रहो

विदित हो कि हमने ता० २५ मई को एक बुक शीट यहां से बंबई को भेजा था सो आज तक नहीं पहुंचा यह गफलत पोस्ट आफिस की है और पहिले भी कुई अंक वेदभाष्य के ग्राहकों के पास नहीं पहुंचा ऐसा मालूम होता है कि चिट्ठीरसाँ आदि छोटे आदमियों में से किसी २ ने जो हमसे चिड़ते हैं पक्षपात करके गुम कर दिये हैं अब बुक भी ऐसे ही मारा गया और अब हम पोस्ट आफिस पर नालिश करेंगे, सो आपसे पूछते हैं कि तुम्हारी क्या सम्मति है और ऐसे बुक वा बुक पोस्ट, और चिट्ठी आदि का पता पोस्ट आफिस में किस रजिस्टर में मिल सकता है और नालिश किस जगह करें बंबई में वा अमृतसर में, या दोनों जगह से कहीं कर देवें, और हमारा नुकसान बहुत हुवा है कितने हर्जे की नालिश करें और क्या पैरवी करें जल्दी पत्र के देखते ही जवाब भेज दीजिये।। और काशी के हिसाब किताब के लिये चिट्ठी भेजी थी उसका क्या प्रबंध किया है।।

३० जू० ७८

दयानन्द सरस्वती

अमृतसर

न० १३२

१

पंडित स्कंदलाल रामनारायण जी आनंद रहो

विदित हो कि कल हमने एक चिट्ठी पोस्ट आफिस की बाबत भेजी है सो आप जरूर उसकी सलाह लिखें कि क्या करना उचित है॥

और हमने कई बार लाजरस को लिखा कि १६ पृष्ठ और विज्ञापन का हिसाब भेज दो सो उन्हों ने कुछ नहीं लिखा इस लिये तुम जब जाओ तो इन का भी हिसाब समझ लेना॥ और जब तुम बनारस जाओ तो हमको लिखना और जब वहाँ से आओ तब वहाँ का हाल भी लिखना॥

वेदभाष्य अब बहुत जल्दी सब के पास पहुँचेगा॥ और आप के पास जो ३४) की हुंडी पहुँची सो हमने जान लिया॥

दयानन्द सरस्वती

१ जूलाई सं० १८७८ अमृतसर

१

पंडितसुंदरलालरामनारायणजी आनंदरहो॥

विदितहो कि चिट्ठी आपकी आई हालमालूमहुआ, हमने आजहिसा
बकीनकलकरके लाज़रससाहबके पासभीभेजदीहै, और उनको लि
खदियाहै कि, हमारी ओरसे पंडितसुंदरलालरामनारायणजी आपसे
हिसाबसमझनेके लिये और पोथीलेने तथारूपयेदेनेके लिये नियत
कियेगयेहैं, सो अब आप उनसे जिसतरह चाहें हिसाबसमझलेवें, और
आपकेपासजो हिसाब पृथक् पृथक् वेदके अंकोंका तथासंध्याभाष्यका
भेजागयाहै, वह बिल्कुल ठीक और दुरुस्तहै, परंतु जो हिसाब रूपयेका
भेजागयाहै, उसमें कुलरूपया लाज़रसको देनेके लिये १३४६-)॥
लिखाथा जिसमेंसे १८)॥ औरवसूलहोगयेहैं सो अब १३२८-)
लाज़रससाहबको देना और बाक़ीहै॥ और लाज़रससाहबकोयहभी
लिखदियाहै कि आपकेपास चिट्ठी वा हिसाबभेजें॥ फिर आप घरही
परनिश्चितकरके हिसाब जाकर ते करदेना, और हम बहुत आनंदमें
हैं॥ हमने लाज़रससाहबको
काशिकाका मूल्य देदियाहै जो
आठवें अध्यायतक छपचु
काहै तो लेते आना॥

दयानन्दसरस्वती

मेरठ ता० ८ जुला० १८७८

न० १५९

१

पंडितसुंदरलाल रामनारायणजी आनंदरहो

विदितहो कि इससे पहिले एक चिट्ठी नम्बरी १५३ लिखी हुई तारीख ८ जुलाई की आपके पास भेजी गई है, पहुंची होगी, और लाजरससाहब के पास हमने हिसाब और चिट्ठी भेज दिये हैं, सो वे आपके नाम चिट्ठी लिखेंगे॥ और पूर्वोक्त चिट्ठी में लाजरस को देने के लिये १३२८-) रुपये लिखे गये थे, सो आज एक चिट्ठी हमारे पास भुक्कसरजूप्रसाद की बड़े मिर्जापुर से आई है, वे लिखते हैं कि हमने १००) लाजरससाहब के पास भेज दिये इसलिये आपको इत्तला दी जाती है कि १२२८-) लाजरस को देने रहे और इसकी बाबत लाजरससाहब को भी लिख दिया गया है॥ यहां पर वृष्टि बहुत अच्छी हो गई है वहां के समाचार भी लिखिये॥

१० जुलाई सं० १८७८ दयानन्दसरस्वती

अमृतसर

९२

१

पण्डितसुंदरलालरामनारायणजी आनंदरहो
विदितहो कि आज एक चिट्ठी लाजरससाहबकी आई उससे
मालूम हुआ कि, उन्होंने आपके पास हिसाब भेजदिया है
सो पहुंचा होगा और उनको १२१८।।-) देनाबाकी रहा है
सो जान लेना जब हिसाब मिलाकर काशीजा ओ तो हमको
इत्तला देदीजये और ब्रजभूषणदाससे हमारीपोथी
लेते आना जो पोथी उनके पास रक्खी हैं उनका सूचीपत्र पहिले
आपके पास भेजा गया है, और जब आप वहांसे आवें
तबभी लिख भेजें, हम ईश्वर की दया से बहुत आनंद हैं॥

हस्ताक्षर
दयानन्दसरस्वती

१४ जुला० १८७८ ।।

अमृतसर

नं. २०३   १

पंडितसुंदरलालरामनारायणजीआनंदरहो
विदितहोकिहम १८ ता०को अमृतसरसेरवानाहोकर
रुड़कीआगयेहैं, आपलिखयेकि काशीकेहिसाबका
फ़ैसलाकरकै वहांहोआयेवानहीं॥
औरलाजरसके समीप ८॥) और पहुंचगयेहैं
सोअबलाजरससाहबको १२१०-) देनेरहे॥
चिठीकाउत्तर शीघ्रभेजये॥

हस्ताक्षर
दयानन्दसरस्वती

रुडकीज़िलेसहारनपुर

२२जुला०७८

नं०२१८

१

पंडित सुंदरलाल रामनारायण जी आनंद रहो

विदित हो कि लाज़रस के पास ७) बाबू रामनाथ ने और भेजे हैं सो अब उनके १२०५=) रहे हैं, और पुस्तकों का हिसाब जो आपके पास भेजा गया है उसमें से, मंत्रभाष्य से ११ अंक पर्यंत १-१ और १२ अंक से १६ अंक पर्यंत २-२ और कम कर देना क्योंकि लाज़रस ने ग्राहकों के पास भेज दिये हैं॥

और आप हिसाब का फ़ैसला जल्दी कर लीजिये क्योंकि काशी और लाहौर वाले सर्राफ़ जल्दी कर रहे हैं कि हमसे अब तक हुंडी के रुपये क्यों नहीं लिये, सो यह विचार कर जल्दी निमट लीजिये,॥ हम कुशल आनंद हैं॥

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

२६ जुला० ७८

रुड़की ज़िले सहारनपुर

और आजकल किसी के पास कुछ भी रुपये का डालना अच्छा नहीं है॥

१

पंडित सुंदरलाल राम नारायण जी आनंद रहो

विदित हो कि आपके पास एक मनी आर्डर बनारस के खजाने का जो नलफुसे आया था आपके पास भेजा जाता है आप इसका रुपया वसूल करके अपने पास जमा कर लेवें॥

और काशी से शायद आपके पास भी खीमल से पुस्तकें आ गई होंगी और हिसाब वगैरे के कागज़ बनाकर हमारे पास भेज दीजिये और यह भी लिखिये कि लाला भी खीमल ने बजरूपराय दास से ले लिये वा नहीं इस बात की इत्तला भी दीजियो। रसीद भेज देवें॥

हस्ताक्षर

१० अग. १८७८ — दयानन्दसरस्वती

रुड़की जि. सहारनपुर

और इस मनी आर्डर पर लाज़रस के दस्तखत कराकर बनारस से रुपया वसूल कर लो क्योंकि यह उन्हीं के नाम है

नं० ३२१

१

पंडित रामनारायणलाल जी आनंदरहो

विदितहो कि आपकी नहि लेचिट्ठी आई थी जिसमें लिखा था कि लाला शिखीमलने लाजरस साहबसे पुस्तकें लेकर प्रयागको रवाना कर दयी हैं॥ परंतु दूसरी चिट्ठी उनके पहुंचनेकी अभीतक नहीं लिखी, और आपने वे पोथी संभाल ली वा नहीं,

इस पत्रका उत्तर शीघ्र भेजये, और यह भी लिखें कि ब्रजभूषण दासने क्या उत्तर आपको लिखा है, रूडकी में आर्य समाज बन गया है और आशा है कि यहां मेरठ में भी होजावेगा, हम बहुत आनंद में हैं॥

हस्ताक्षर

१ सितंबर १८७८ दयानन्दसरस्वती

मेरठ

हमने आपके पास भेजनने के लिये बाबू छयमलाल को जो कि पोस्ट आफिस सहारनपुर में नोकर हैं १०) देदिये हैं आप लिखिये कि आपके पास पहुंचे वा नहीं॥

१

४।४।६

पंडित रामनारायणजी आनंदरहो

आगे पत्र आपका आया सबहाल मालूम आ,

ब्रजभूषणदास कठिनता से पुस्तकें देनेपर प्रसन्न हुए हैं और पुस्तकों का निकलना भी वहां से कठिन था सो अब जैसे हो पुस्तकें निकाल लें जो लाला भिखेमलजी को अवकाश न हो तो किसी और के पास पुस्तकें रखवा दो कि वे आपके पास भेज देवें क्योंकि जैसे तैसे वे पुस्तक देनेपर राजी हुए हैं सो अब देर लेने न कीजये और जब वे पुस्तकें दे देवें पत्र द्वारा हमको विदित कर दीजये, हम बहुत प्रसन्न हैं॥

हस्ताक्षर

११ सि० १८७ — दयानन्दसरस्वती

मेरठ

और शनि को आप जाकर ब्रजभू० से पुस्तकें लेकर रविवार को चले आये वा किसी और को भेज दीजिए वह लेकर चले आवें और पुस्तकों का पत्र तुमको भेज चुके और जो आने जाने में व्यय हो हमारे हिसाब में लगा लेना॥

४८१

१.

पंडित रामनारायणजी आनंद रहो

विदित हो कि इससे पहिले एक पत्र आपके पास भेजा गया था, सो अबतक उसका उत्तर नहीं मिला,॥ इसलिये आपको फिर लिखते हैं कि आप ब्रजभूषणदासजी से पोथी मँगा लीजिये और सूचीपत्र से जो पुस्तकों का आपके पास पहिले भेजा गया है मिलाकर हमको पत्र द्वारा विदित कर दीजिये॥ और हमको अंग्रेजी, नागरी, और उर्दू का जानने वाला एक मुनशी चाहिये है जो मुंबई में जाकर वेदभाष्य ठीक ठीक सब ग्राहकों के पास भेजा करे और प्रूफ भी शोधा करे॥ तथा जो कहीं से चिट्ठी पत्र आवे उसका उत्तर भी ठीक ठीक लिख दिया करे, मासिक उसको २०) से ३०) तक देवेंगे, परन्तु वह मोतबिर होना चाहिये और किसी अच्छे प्रतिष्ठित मनुष्य की जान पहिचान भी हो, क्योंकि कुछ थोड़ा बहुत रुपया भी उसकी सपुर्दगी में रहैगा, और शीघ्र उत्तर भेजियेगा॥

हम बहुत आनंद में हैं

हस्ताक्षर

दयानन्द सरस्वती

१८ सि० १८७८

मेरठ

नं० ५५९

१

पंडित सुंदरलाल रामनारायण जी आनंद रहो

विदित हो कि मुंबई से आपके पास को १००० अंक १५+१५ भूमिका के रवाना हो चुके हैं सो पहुंचे होंगे वा पहुंचेंगे, जब आपके पास पहुंच जावें तो हमको भी विदित कर दीजिये, और बहुत काल से कोई पत्र आपका नहीं आया, सो अब भेजिये, और लिखिये कि काशी से आई हुई पुस्तकें आपने संभाल ली वा नहीं और व्रजभूषणदास से भी पुस्तकें आ लीं वा नहीं जो न आई हों तो जल्दी किसी की मार्फत मंगा लीजिये और पुस्तक भी संभाल कर हमको पत्र द्वारा विदित कर दीजिये हम बहुत आनंद में हैं॥

५ अक्तूबर ७८

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
दिल्ली

१

पं० ५०३

पंडित रामनारायणजी आनंद रहो

विदित हो कि पत्र आपका १३-१०-७८ का लिखा पहुंचा सब हाल मालूम हुआ॥ १५-१६ नम्बर अंक भूमिका के की १००० कापी पहुंची सो जानी जब आप सब पोथी संभाल लें तो हम को विदित कर देवें और व्रजभूषणदास के पास [कितनी] पोथी बाकी हैं उनका सूचीपत्र भेजते हैं सो मंगा लीजिये, [लाल] भीखे मल के पास भी सूचीपत्र भेजा है और चिट्ठी भी लिख दी है और आप भी ताकीद से लिख दें कि उससे पोथी मंगा लेवें और व्रज० दास को भी हमने लिख दिया है और हम सब प्रकार से आनंद में हैं।

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
दिल्ली

१६ अक्टूबर ७८

संख्या पुस्तक	नाम पुस्तक
८	जिल्द महाभारत की
४	महाभारत की
४	सूची की
१	विषयवाद
१	मुक्तावली
१	कारिकावली
१	जागदीशी
४	सूची पुस्तक
१	उपनिषद् गुजराती [illegible] की
१	पातंजलयोगशास्त्र
३	जिल्द महाभाष्य
१	वेदोक्तधर्मप्रकाश
१	व्यामोहविद्रावण
१	भूगोलहस्तामलक
१	दीधिति जागदीशी॥

ओ३म् १

पंडित सुंदरलाल रामनारायण जी आनंद रहो

विदित हो कि बाबू मक्खनलाल और भोलानाथ आपके पास पहुचते हैं, आप इनको भूमिका के १३ वें नम्बर की १ कापी दे दीजिये॥ और उसका मूल्य ।=) आपको दे देवेंगे॥ और दश भूमिका भी और सब हाल आपको पहिले पत्रों में लिख चुके हैं॥ इनको दे दीजिये

यहां पर सब प्रकार से कुशल है॥ और जो कोई आप से भूमिका मांगे तो ५) रुपये लेकर दे दीजिये

हस्ताक्षर

१८ अक्तूबर १८७८ | दयानन्दसरस्वती

दिल्ली

६४२

६

पंडित रामनारायण जी आनंद रहो

विदित हो कि आपका पत्र कार्त्ति० शु० १ का लिखा पहुंचा
सब हाल मालूम हुआ, ॥ हमको पं० सुंदरलाल के घर में
से मर जाने का शोक है, परंतु क्या कीजिये यहां सब लाचार
हो जाते हैं, यह फल बाल्यावस्था में विवाह करने का
है, अब भी आप सब लोगों को समझना चाहिये ॥
आप जानते हैं कि कोई हमारा ऐसा स्थान नहीं है
कि जहां एकही बार पोथियां पहुंचा दी जावें, इस
समय तो आपही का घर है आप हो उनकी यत्नपूर्वक
रक्षा कीजिये और जब आप आगरा को जावें
तब सब पोथियां किसी मनुष्य के यहां रख जावें
बालमुकुंद हो वा कोई हो जो उनको युक्ति से रक्खे,॥
और उसके नाम तथा पते से हमको इत्तला देदे
कि जब जो पोथी चाहिये उससे मंगा लेवें ॥ और मुं
बई से कुछ पोथियां आपके पास पहुंचाने के लिये
रवाना हुई हैं सो लिखिये कि अभी पहुंची वा नहीं ॥

और वेदभाष्यभूमिका २०
सत्यार्थप्रकाश ३८
संध्योपासनादि० ५०
संस्कारविधि ३०
बाबूसमर्थदान स्टूडेंट गवर्न्मेंट कालेज
अजमेर
के पास भेज दीजिये ॥ और कार्तिक शु० ११ वा
१२ को हम पुष्कर जावेंगे ॥ और सब प्रकार से
आनंद है ॥

हस्ताक्षर
दयानन्दसरस्वती
दिल्ली

२८ अक्टू० ७

Books as ordered by Swamy sent on Monday 11/11/78 thro: rail. by goods train in 2 Boxes consigned to Samarth dan Charan Govt College Ajmere

५५२ १

पंडित सुंदरलाल रामनारायण जी

आनंद रहो

मालूम हो कि इससे पहिले आपके पास एक पत्र

३८ सत्यार्थप्र० ३० संस्कार० २० भूमिका, संध्यो० ५०

बाबू समर्थदान चारण स्टुडेंट गवर्नमेंट कालेज अ
जमेर के पास भेजने के लिये लिखा था, सो आशा
है कि आपने पूर्वोक्त पोथी पूर्वोक्त ठिकाने पर भेज दी
होंगी, और जो न भेजी हों तो बहुत जल्दी भेज दी
जिये क्योंकि वहां पुष्कर के मेले पर बहुत सी पो
थी उठ जावेंगी॥ और मंत्रभाष्य सहित भूमि
का के १५ अंक क्रमपूर्वक रक्खो जिससे जब हम
चिट्ठी जहां के लिये लिखें तब वहीं वहां भेज दें॥
और आप सब पोथी रक्षापूर्वक रक्खें जिससे दी
मक आदि हानि न करें यदि उनकी रक्षा में कुछ थोड़ा
खर्च भी मासिक हो तो भी कुछ शंका नहीं, वा

आप किसी के, जैसे कि बाल मुकुंद हैं रख दीजिये और हमको इत्तला दे दीजिये जिससे

जब हम जहां पोथी भेजने के लिये लिखें वे भेज दें और टिकिट आदि का खर्च हमारे
हिसाब में लिख लें॥ क्योंकि सिवाय तुम्हारे हमारा और कौन लाभ है जहां पोथी रख दें वे

इसलिये उनकी रक्षा और बंदोबस्त आपही के ऊपर है
यहां पर आर्य्यसमाज होगया है॥ अब यहां से हम
ता० ६ नवं० को पुष्कर जावेंगे, हम बहुत आनंद में
हैं॥

हस्ताक्षर
दयानन्दसरस्वती
दिल्ली

४ नवं० ७८

Books sent to Ajmer — full number
see Swamiji's letter No 61,2

१

Letter No 698

पंडित सुंदरलाल राम नारायण जी आनंद रहो

प्रकट हो कि इससे पहिले दिल्ली से एक पत्र आपके पास भेजा था सो पहुंचा होगा, हम ६ नवं० को दिल्ली से चलकर कल ७ नवं० को पुष्कर पहुंच लिये और नाथजी के दुलीचे में ठहरे हैं पूर्णिमा पीछे फिर हम अजमेर जावेंगे, अब आप बहुत जल्दी नीचे लिखी पोथी अजमेर में हमारे पास भेज दीजिये

संस्कारवि० ३० भूमिका २० सत्यार्थप्र० ३६ आर्य्याभि० ५० वेदविरुद्धमतखंडन ५० वेदांतिध्वांतनि० ५०॥

और यह भी लिखो कि मुंबई से आपके पास पोथी आई वा नहीं॥ अब पूर्वोक्त लिखित पुस्तक आप बहुत जल्दी अजमेर में हमारे पास भेज दीजिये॥ हम बहुत आनंद में हैं॥

हस्ताक्षर
दयानन्दसरस्वती

८ नवं० ७८

पुष्कर

६२

See list of books in words of Swamiji letter No 648—

पंडित सुंदरलाल रामनारायण जी आनंद रहो

मालूम हो कि आज पत्र आपका आया सब मालूम हुआ

आपके ३००॥) कुल हमारे जिम्मे हुए सो जाने, आप कुल को

पियों को पृथक् पृथक् लगा रक्खें और भूमिका के अंकों

१ अंक से २८ अंक पर्य्यन्त क्रमपूर्वक लगा रक्खें, कि जब

हम जहां भेजने के लिये लिखें तब ही तुम वहां भेज दो,

और हम पुस्तकों की रक्षा सुनकर बहुत प्रसन्न हुए, और

मुंबई से जो कापी आपके पास पहुंची सो जानी, अब हम

अजमेर में आनंदपूर्वक पहुंचकर नये दर्वाज़े के बाहर

पुष्कर की सड़क पर रामप्रशाद सेठ के बाग़ में ठहरे हैं॥

इसलिये अब आप यहां बहुत जल्दी हमारे पास नीचे लि

खी कापी भेज दीजिये॥ सत्यार्थप्र० १२ संस्कार० २०

भूमिका १० संध्योपा० १०० आर्य्याभिविन० ५०

वेदविरुद्धमतखं० ५० वेदान्तिध्वांतनिवारण ५०॥

और दानापुर के आर्य्य समाज में २० भूमिका और जो पं. पी

वे चाहते हैं सो भेज दीजिये॥ हम बहुत आनंद में हैं॥

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती
अजमेर १३ नव० ७८

१

५८८

पंडित सुन्दरलाल रामनारायणजी आनन्दरहो विदित हो कि आजपत्र आपका आया सब हाल मालूम हुआ, अब आप नीचे लिखी पोथी हमारे पास जल्दी भेज दीजिये॥

आर्याभिविनय २५
वेदांतिध्वांतनिवारण ११
वेदविरूद्धमतखंडन ३८
सत्यासत्यविचार ५०

See on reverse
It has also connection
with letters on 67 & 198

और बाबू समर्थदानजी के पास जो आपने पोथियां भेजी सो जानी॥ अब यहां पर व्याख्या न होता है आगे जो कुछ समाचार होगे सो लिखेंगे॥ हम कुशल आनंद में हैं॥

१६ नव० ७८

हस्ताक्षर
दयानन्दसरस्वती
अजमेर

७०२ १

Replied on 24/11/78 saying that books already sent on [illegible]/11/78–

पंडित सुंदरलाल राम नारायण जी
आनंद रहो

विदित हो कि आप ने जो दो संदूक पुस्तकों भेजे सो हमारे पास पहुंचे, और नीचे लिखी पोथी आपसे हमने पाई जो कि उन दोनों संदूकों से निकलीं॥

सत्यार्थप्रकाश ३८
संस्कारविधि ३०
वेदभाष्यभूमिका २०
मंत्रभाष्यसहित
संध्योपासन ५०

आप खातिरजमा रक्खें॥

और अब आप नीचे लिखी पोथी बहुत जल्दी यहां हमारे पास भेज दीजिये॥

नामपुस्तक	संख्यापुस्तक
आर्य्याभिविनय	२५
वेदांतिध्वांतनिवारण	११
वेदविरुद्धमतखंडन	३८
सत्यासत्यविचार	५०
वेदभाष्यभूमिका मंत्रभाष्यसहित	१०
संध्योपासनादिपंचमहायज्ञविधि	५०

येपोथियां आपजल्दी भेजदीजिये॥
और वेदभाष्यभूमिकाके सब अंक क्रमपूर्वक
लगारखिये, जबहम किसीकेपास भेजनेकेलिये
आपको लिखें तबही आप वहां भेजदेवें॥
यहांपर नित्य व्याख्यान होताहै. जो आगे समाचार
होंगे सो लिखे जायेंगे, हम बहुत आनंद में हैं॥

हस्ताक्षर
दयानन्दसरस्वती
अजमेर

२०.११.१८७८

९१२ १

पंडित सुंदरलाल रामनारायणजी आनंद रहो

विदित हो कि आपके पास २० नवंबर को पत्र नम्बरी ७०:

भेजा गया है पहुंचा होगा जिसमें आपको नीचे लिखी

पोथियों के भेजने के लिये लिखा गया था॥

आर्य्याभिविनय	२५	वेदांतिध्वांतनिवारण	१
वेदविरुद्धमतखंड०	३८	सत्यासत्यविचार	५
समस्त भूमिका में भाष्य सहित	१०	संध्योपासनादि पंचमहायज्ञविधि	५

सो ये पोथी जल्दी भेज दीजिये और इन्हीं पोथियों के

साथ ३० संस्कारविधि भी भेज दीजिये॥

यहां पर नित्य व्याख्यान होता है और सब प्रकार से

आनंद है॥

हस्ताक्षर

दयानन्दसरस्वती

२२ नवंबर ७८

अजमेर

१

पंडित सुंदरलाल रामनारायण जी आनंद रहो मालूम हो कि कल आपके पास एक पत्र भेजा गया है जिसमें पोथियां भेजने को लिखा था, परंतु आज आपका पत्र २० नवम्बर का लिखा पहुंचा जिससे मालूम हुआ कि आप पुस्तकें यहां को रवाना कर चुके इसलिये लिखा जाता है कि अब आगे पोथी मत भेजना। और जब रेल पर से पोथी आ जावेंगी तब ही आपके पास रसीद भेज देंगे, और बाबू समर्पदान जी के पास पोथी पहुंच ली है आप खातिर जमा रक्खें॥ हम बहुत आनंद में हैं॥

हस्ताक्षर
दयानन्दसरस्वती

२३ नवं० ९८

[illegible]

१

७५१

पंडित सुंदरलाल रामनारायणजी आनंद रहो

विदित हो कि पत्र आपका २ नवम्बर का लिखा पुस्तकों की बिल्टी सहित पहुंचा, और आज पुस्तकों का संदूक रेल पर से आ गया है, सो उस में से नीचे लिखी पोथियाँ निकलीं, जो कि आपके नाम परजमा की गईं॥

संस्कारविधि ३०
वेदभाष्यभूमिका मंत्रभाष्य सहित . . . २०
सत्यार्थप्रकाश १५
आर्य्याभिविनय २०
वेदांतिध्वांतनिवारण ११
वेदविरुद्धमतखंडन ३८
सत्यासत्यविचार ५०
संध्योपासन १००

आप खातिरजमा रक्खें, और सब प्रकार से कुशल है॥

३ नवम्बर १८७८
दयानन्द सरस्वती
अजमेर

और आपने जो १५ सत्यार्थप्रकाश भेजे हैं, ये आप के पास कहां से आये हैं सो लिखिये," और आपने ये क्यों भेज दिये॥ इनकी विक्री तो होही नहीं सकती क्योंकि ये पूरे नहीं हैं॥ उत्तर भेजिये॥

Replied-[illegible]

ओ३म्   १

पंडित सुंदरलाल राम नारायण जी आनंद
युक्त रहो

प्रकट हो कि आपका पत्र नसीराबाद से हमको मिला
बहुत आनंद हुआ, अब हम कल १५ दिसम्बर को वहां से
अजमेर होते हुए जयपुर में आकर सांगानेर दरवाजे के
बाहर ~~सामने~~ सदासुख ढढ्ढा के बाग में ठहरे हैं॥
और आज हम इस पत्र के साथ आपके पास २००) की
हुंडी भेजते हैं सो रसीद बहुत जल्दी भेज देना
और आपके जो ३००।।।) हमारी ओर चाहियें सो ये २००)
उस में जमा कर लेना॥ हम बहुत आनंद में हैं
उत्तर शीघ्र भेजें॥

हस्ताक्षर
दयानन्द सरस्वती

१६ दिस० ७८

जयपुर

१

नमोनारायणाय

पण्डित सुंदरलाल जी आनंदित रहो

विदित हो कि हम ता० १६ दुपहर की रेल पर सवार होकर प्रयाग
पौंहचैंगे सो आप स्थान का बंदोबस्त रहने का कर लेने तथा आगे
हम लिख चुके हैं मकान हमारे ठैरने को शहर व छावनी के बीच में
रेल के पास और व्याख्यान का शहर में हो और नोटिस भी
व्याख्यान का छपवाइ लेने तारीख की जगै छोड देने मकान की
निश्चै हो जाइ तो छपवाइ देने नहीं तो जगे छोड देने हमारे पौंहचे
पीछे लिख जाइगा और हम को रोज ७ से ज्यादे रहने का अवका
श नहीं है इतने अरसा में जो व्याख्यान हो जाइगे सो हो जाइगे
पत्र सभासदन को नमस्ते ।। ता० १४ अक्तुबर सन १८७९ ई०
मु० कानपुर ।। दयानन्दसरस्वती

पण्डित सुन्दरलाल वो रामनारायण जी आ
नन्दित रहो — पण्डित मदनराम जी ने
मुझसे चलते समय कहा था कि मैं जीविका
के लिये अत्यन्त दुखी हूं आप मुझे अपने
साथ रखिये इसलिये आप उनसे पूछ
कर लिखिये यदि उनकी इच्छा हो तो काशी
में मेरे पास चले आवें — दूसरे यह कि यदि
वहां छापेखाने के केस तैयार मिल सकते
हों तो हमको लिखिये हमको उनकी जरू
रत है करनेल ओलकाट साहेब और मेडम
ब्लेवस्तकी से तुम मिले होंगे इसका हाल लि
खना। सं० १९३६ मि० मार्ग० व० १२ बुध

दयानन्द सरस्वती

पंडित भीमसेन आनंदित रहो
[आपका पत्र] आया समाचार विदित हुआ ॥ रामाधार
[वाज पेयी] नं खत्त उन्ने जो हमारे पास हिसा [ब] भेजा था
वह आज ता० २० फर्वरी में भेजा है इसको अपने
हिसाब के साथ पड़ताल कर बाकी जो निकले उसका
तकादा करना और उनको यह लिख भेजना कि आ
पाचा है जिसको प्रबंधकर्त्ता करें अन्य आपही सम
झ जायँगे क्योंकि यह हिसाब आपही के हाथमें र
हना अच्छा है। तुम लिखा करते थे कि अब [वीआरक]
र्म प्रति मास छपते हैं अब क्यों नहीं उतना छपता]
है यह क्या कारण है जिससे छपने का काम ढीला पड़
गया तुम्हारे लेखानुसार कमसेकम अन्य पुस्तकों
के १२ फर्मे छपना चाहिये वेदभाष्य के ८ फर्मे छोड
कर। अब दो महीने में ८ फर्मे कुल छपे है यह क्या
आश्चर्य है। अब जो मासिक हिसाब भेजा करो उसके
सग यह भी लिख भेजा करो कि इस मास में इतने फर्मे
छपे और न्यूनाधिक छपने का कारण भी अर्थात्

फल्गुन २ कारण होने से कम वा अधिक छपे । मुन्शी ब्रह्मानन्द हमारे पास नहीं है और न कोई पंडित। राजवल्लभ पहाड़ी ब्राह्मण है जो कि जैपुर से चला गया था ॥ अब कोई दो महीने होने को आये कई वार तुमको लिख चुके हैं कि पुस्तक भेज दो वे अब तक नहीं भेजीं अब देखत पत्र के निम्नलिखित पुस्तकें भेज दो

वेदां० १०
अव्ययार्थ १०
मेलाचांदा० १०
शिक्षापत्री १०
गोकरुणा० १००

सब यंत्रालयस्थों से आशीर्वाद कह देना ॥

ता०. २० फर्वरी ८

(द० स०)

२२-२-५८
२५०

½ Bookpost — Stamped

Lallah Sumarith Dan Sku

दयानन्दसरस्वती { in the Govt. College

Meerut Ajmere

स्वामीदयानन्दः

A. JMERE SEP 13

MEERUT. SEP:12.

ओ३म्

मुदर्रिस राम दयाल आनंदित रहो विदित हो कि गोरक्षार्थ जो तुमने श्रम किया सो धन्यवाद देने की योग्यता है आगे जितनी सही हुई हो उसको रजिष्टरी करा के हमारे नाम से उदयपुर में भेज दो और आगे को जहां तक हो सके कराते जाना और माधोसिंह आदि के सहायता से जो सही में अधिकता हुई है इसलिये उन सज्जनों से हमारा आशीर्वाद कह देना

मिती भाद्रवदी ५ रवि

दयानन्द सरस्वती

ओ३म्

पंडितरामदयाल जी आनंदित र-
हो विदित हो कि आपके यहां से गो रक्षा
र्थ सही कराके जो भेजा सो पहुंचा इसका
र्य के बदले हम सब को धन्यवाद देते हैं।।
सबसे हमारा आशीर्वाद कह देना।।

मिती माघ सुदी ६ मंगल संवत् १९३९

दयानन्दसरस्वती
उदयपुर

ओ३म्

मुन्शी समर्थदानजी आनन्दित रहो
विदित हो कि आज यजुर्वेद के ४७४-
से ४८१ वें तक के अंक भेजे हैं और कुछ बां-
धने वाले की भूल से यजुर्वेद के रह
गये थे सो भी भेज दिये थे पहुंचे होंगे
अब तुम्हारा रा का मतो कर दिया परन्तु
तुमने हमारे पास मासिक हिसाब न
हीं भेजा और हम लिख भी बहुतबार
चुके अब शीघ्र मासिक हिसाब भेज
देना। और जो तुमने भीमसेन के
विषय में लिखा सो ठीक है। आज ७
लकादि सब चित्तौड़ को भेज दिये हैं औ
र हम आगामी बृहस्पति के प्रातःकाल
यात्रा करेंगे मिति फाल्गुन बदी ५ सं०
दयानन्द सरस्वती

EAST INDIA POST CARD
THE ADDRESS ONLY TO BE WRITTEN ON THIS SIDE
QUARTER ANNA
प्रबन्धकर्त्ता मुन्शी समर्थदान वैदिक
यंत्रालय प्रयाग (इलाहाबाद)
ALLAHABAD
FEB 28

(श्री स्वामी जी महाराज के आज्ञापत्र की प्रति)

ओ३म्

१

मंत्री आर्यसमाज फर्रुखाबाद लाला काली चरण रामचरण जी आनंदित रहो।

विदित हो कि रमानंद ब्रह्मचारी की माता मुहल्ला जनिडाई साह बिहारीलाल जी की हवेली के पिछवाड़े जोकि लाला बलदेवदास ने, मकान मोल लेकर इस के पिता शंकरानंद जी को धर्मार्थ दिया, उसमें रहती है। यदि जब कभी उसका शरीर छूट जाय तो उसके अंत्येष्टि कर्म के लिए ५०) पचास रुपये लाला निर्भयराम जी की कोठी से लेलेना, और हमारे हिसाब में लिखा देना, और उन रुपयों से, घृत और सुगंध्यादि पदार्थों को लेकर जैसा विधान षोडश संस्कार विधि के पुस्तक में लिखा है उसके अनुसार मृतक कर्म करा देना, और इस काम के कराने में किसी प्रकार आलस्य न करना, और इस बात को प्रत्येक सभासद को विदित कर देना जिससे समय पर सहायक होवें। ज्येष्ठ शुक्ल ४ सं. ४०

{ दयानन्द सरस्वती {

उदयपुर

निम्नलेखानुसार मृतकसंस्कार करने के लिए घृतादिपदार्थ लिए जावें ॥

२५) पच्चीस रुपये का ०॥ पक्का घृत

१०) दश रुपये का सफेद चन्दन व सन्दल चंदन

५) अगर तगर कस्तूरी कपूर केसर आदि सुगंधि द्रव्य

५) वस्त्रादि ———————————

५) पलास अर्थात् ढाक की लकड़ी

५०) उक्त लेखानुसार ५०) रुपये केवल दाह कर्म में खर्च होने चाहिए

बाबु विश्वेस्वरसिंहजी आनन्दितरहो.

तुमने लिखा सो ठीक है इसमें चार समाज जो कि प्रयाग के निकट हैं उनसे इस बात का नियम कराना चाहिये हां मेरठ समाज कुछ उन तीन समाजों से दूर है तथापि रेल से कुछ दूर नहीं एक फर्रुखाबाद दूसरा मेरठ तीसरा दानापूर और चौथा लखनउ इन चार समाजों के मंत्रियों को इस हमारे पत्र की नकल के साथ लिख भेजो हो वर्ष में एकवार पारी आवेगी क्योंकि छः महिने के पश्चात् किसी चार समाजों में से जिसकी पारी हो वहां से धार्मिक उत्तम आया करे वह अन्तरङ्ग सभा की संमति से आवे और वह हिसाब में अच्छि तरह से समझता हो तथापि धार्मिक और देशोन्नति में प्रीति रखनेवाला हो चाहे समाज धर्मार्थ वैदिक यंत्रालय का कितना ही सहाय करे और वास्तव में समाजों ही के प्रताप से वैदिक यंत्रालय बना है तथापि समाज से जो कोई पुरुष आवे उसके आने जाने और जब तक वहां रहे तब तक खाने पीने का खरच वैदिक यंत्रालय से दिया जाय और सब आर्य्यसमाजों में वर्ष२ मे वैदिक यंत्रालय का आय व्यय और पुस्तकों का जमा खरच भी एक छोटे से पुस्तकाकार में छप के स्वीकार पत्र के सब सभासदों और सब आर्य्यसमाजों मे भी भेजा जावे इस से बहुत अच्छी बात रहेगी और जो कुछ हिसाब में गलती

दी खे वह वैदिक यंत्रालय की प्रबंध कर्तृ प्रयागसभा को तं
हृद्वारा मुझको और पंडित सुन्दरलालजी को और उनचार
समाजों को विदित किया जाय उसका उचित प्रबन्ध कर
ने के लिये प्रयाग की सभा को अपनी संमति पूर्वक मैं वाअ
न्य सब लिख भेजें और वह सभा यथावत् प्रबंध कि
या करे इससे निश्चय है कि प्रबन्ध अच्छे प्रकार चलेगा
और मुंशी समर्थदान के २७ सत्ताईस तारिख अगस्त का उ
त्तर यही है कि उन्हीं ने कापी मांगी हैं और भीमसेन के
पत्र की नकल भेजी थी और कापी आज ही भेज ते अ
जर विचार है रजस्टरी नहीं होती इसलीये कल भेजेंगे

मिति भाद्रसुदि २५) ह० दयानन्द सरस्वती,
रविवार संवत् १९४०) जोधपुर राज मारवाड.

श्री स्वामिजी महाराज ने जो अंत समय वैदिक यंत्राल
य के प्रबंध के लिये पत्र लिखा उसकी नकल है इसी
के अनुसार अब प्रबंध होगा तो अच्छा होवेगा.

ओम्

सुनिये

एक प्रार्थना करता हूं यदि आप सत्यधर्मानु-
रागी और सत्यप्रिय और सत्योपदेशक हैं तो
लोगों से सुनी सुनाई बातों को चित्त से दूर कर
के मेरे इस पत्र को पढ़ते ही प्रसन्न हो जावोगे।
क्योंकि मैं ने कई बार परीक्षा किई हुई है कि
चाहे किसी के मन में कैसा ही वैमनस्य भरा
हुआ हो परन्तु जब आप ऋजुमन और सरल
होके अपने मन का सत्य प्रकट कर दिया जा-
वे तो सत्यसेवी लोग तुरन्त अपने मन का
वैमनस्य त्याग के प्रीति से पूर्ण हो जाया करते
हैं।। अब सुनिये

मैं दश वर्ष से आप के विद्वत्व सौहार्द सौ-
जन्य सारल्यादि सद्गुणों को सुन सुनकर परम
आह्लादित होता और दर्शनों को तरसता था
और इन्द्रप्रस्थ मेरठ सहारनपुर प्रभृति नगरों
में आप का पहुंचना सुनकर यह उत्साह मन में
भरता आता था कि अब शीघ्र लब्ध मनोरथ

५ कि जो उन के पुस्तकों से प्रकट होता है। अहो देव
और उपकार को लोगों ने आप के पास अपकार रू-
प कर दिया और गुणग्राही को दोषान्वेषी ठहिराया
मेरी समझ में मुख्य कारण ऐसे व्यतिक्रमों का
यही है कि मेरे और आप के बीच में उन को यह
निश्चय हो रहा है कि ये दोनों परस्पर विरोधी हैं इस
हेतु से वे सरल बात को भी विषम समझ लेते हैं।
मैं सरल हूं वा कपटी, अन्य वा लोगों के समान स्व-
भाव है वा विलक्षण, शत्रु हूं वा मित्र, मानी हूं वा
निर्मान, जो मत आप का है मेरा नहीं है वा भिन्न,
इत्यादि समस्त बातों का सन्देह तो तभी दूर होवेगा
जब मैं आप को मिलूंगा परंतु उस से पहिले मैं एक
प्रार्थना करता हूं और एक प्रतिज्ञा। प्रार्थना यह है
कि लोगों से सुनके आप न तो कुछ मान ही लिया करो
और न उन के सामने आप कुछ श्वेत लक्ष्म मे-
रे विषय में कह ही करो क्योंकि ये लोग श्वेत
को कृष्ण और कृष्ण को श्वेत बना के कभी मिलाप
नहीं होने देंगे कि जिस में मैं बहुत भल देखता हूं।
प्रतिज्ञा यह है कि मैं अब अपने उपदेश में कोई बात
ऐसी नहीं कहा करूंगा कि जिस को लोग आप की
ओर खैंच लें॥

स्वामीजी के हस्तलिखित पत्र

(अंग्रेज़ी)

986/1991

The Bareilly, the 14th of nov 1876

my dear Soonderlál

Today I have sent an application to the Post master Genl., N. W. P. for registering my monthly "Veda Bhashya", which is going to be issued from the month of December 1876; please do the needful.

I shall send 2 tracts, no sooner they are printed, to the Post master General N.W.P.

all right with me and hope the same with you —

Yours affly

दयानन्द सरस्वती

Meerutt - 07/1/77

Pundit Soonder Lall Ram Narain
Post Master General's office
Allahabad

Dear Sir

Will you kindly inform me whether you received (500) five hundred copies of Sunskar - Biddhee from Bombay for Lalla Kessub Lall Nirbhay Ram long ago were requested by me to send you the above number of copies without delay. I am now-a-days in Meerutt & will continue to stop here for a fort-night nearly & so please send me your letter to Meerutt according to my following address

Yours Well-wisher
Swamee Dayanund Saruswottee
Soorty Koond, in the Kothee
of Lady Moottab Singh
Meerutt

Sd/ दयानन्द सरस्वती

Loodianaa -
8/4/77

My dear Ram Narain

In reply to your letter dated 5th inst. you are informed that ~~don't~~ not to send any more Sanskar Biddhi to me this time & I don't require them at all. It was written to you ere this by mistake & you may now keep all of them together in your charge. Please send the remaining subscription Rs 22/8/- for five copies to Messrs E. J. Lazarus & Co. who have put Rs 350, against my name by balance of February & March together regarding the publication of Veda Bhashya. I have

delivered many lectures at Meerutt & Sirhind
[illegible] with successful consequence & now
since I have reached Loodhiana daily Sahkac
are assembled here & the lectures are still
going on with the same beauty-sadeed as
in beginning — I will next visit Amritsar.
My Asheerbad to Pandit Soonder Lall as
well as you. The Veda Bhashya copies
are published twice only, i.e. for February
& March only & not before as you suppose.
The year for the works issue commences from
February/77 — You received copies for
1st & 2nd months, but for the third month
(April) you will get next.

Yours well-wisher
Pandit Swami Dayanund Saruswati.

[signature] दयानन्दसरस्वती

Lahore 7th June 1877

My dear Ram Narain etc.

Your letter of 3rd ultimo is to hand

You need not ask ----- [illegible] Pershad

any thing about --------- or the price.

& let him keep ------ C. if he likes it -

Wait some time more for Shookul Surjoo

Pershad's answer, from whom I have

received a letter this morning. He wishes

to send me some money for purchasing

Punjabi woollen cloth for him & perhaps

he will also include the price of books

in his money order. I have replied

him today — Hoping you are well write

Your uncle P. Hoondas Lall -

My asheerbad to you all -

Yours well wisher

Pandit Swamy Dayanand Sarasswatie

सरस्वती

Rawal-pindi 10th Dec:
1877

Dear Ram Naram

Yours of the 5th inst: duly came to hand & understood all what you stated therein. I accepted Rs 30. as donation for the Veda-Bhashya, from Rao. Goppa Mangesh Manjeshwarkar with Thanks & give much credit to him for his such boldness in the path of truth. I also herein enclose a separate receipt for the amount offered by him as well as answer for his good enquiry. I am very glad to hear that Pandit Sounder Lall will be at Umballa but sorry to say that I am too far

from the place, i e at Rawal-pindi which is widely separated from the Railway Line. Please inform your uncle not to suffer useless trouble in snowy weather & I am always satisfied to hear only now & then, that he is enjoyment of sound health without coming for his long & wide visits. Please give him my best ashirbad & accept the same for yourself

Yours well-wisher.

Pt. Swami Dyanand Saruswatti

दयानन्द सरस्वती

P S

Lala Shiva Dyal Asst Engineer is coming down to Allahabad on public duty & will see you within a fortnight I have given him a letter to your address, so please receive him kindly.

Lucknow
The 21-9-79

My Dear Pundit Soondar Lall
Ram narainjee

Please send ~~the~~ all other Books to Moonshi Inderman Deendar Pora, Moradabad but keep one Book Mahabharat with you — (मुंशी इन्द्रमणिजी मुरादाबाद महल्ला दीनदारपुरा) —

I arrived here on the 18th instant and will leave for Furruckabad thro: Cawnpore on the 24th by morning train and most probably will reach Furruckabad on the morning of 25th. I think I shall stop there for a week or ten days — after which I shall go back to Cawnpore and thence start for Allahabad of which I shall give you notice in due time you ~~may~~ in the meantime make

arrangement for a House re-
for my residence. —
Yours sincerely. —

दयानन्दसरस्वती

(Signed) Swami Dayanund
Saraswati.

स्वामीजी के मुद्रित पत्र

संपादक द्वारा लिखित 'शंखनाद' पुस्तक (औपन्यासिक जीवनी) का संक्षिप्त विवरण

आज स्वतंत्र भारत में हर तरह की गुटबाज़ी जिस तरह हमारे संस्कारशील साहित्य को जड़ से उखाड़ उसे मृत्यु को सौंपे जा रही है ठीक वैसा ही कार्य शिवप्रसाद सितारेहिंद ने किया। तभी हेनरी पिनकाट ने बाबू हरिश्चंद्र को 1884 में जो पत्र लिखा वह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। वे उनकी धूर्तता का उल्लेख करते हुए कहते हैं– 'राजा शिवप्रसाद बड़ा चतुर है। बीस वर्ष हुए, उसने सोचा कि अंग्रेज़ी साहबों को कैसी-कैसी बातें अच्छी लगती हैं। इसलिए उसने बड़ी चाल से काव्य को और अपनी हिंदी भाषा को भी बिना लाज छोड़कर उर्दू को प्रचलित करने में बहुत उद्योग किया।' इससे बढ़कर अशोभनीय और क्या हो सकता है कि एक अंग्रेज़ भारतीय साहित्यकार के बारे में ऐसी टिप्पणी करे।

राजा लक्ष्मणसिंह की मान्यता थी कि संस्कृतनिष्ठ हिंदी ही हिंदुओं की भाषा है और अरबी-फ़ारसीयुक्त उर्दू मुसलमानों की। यह कहना अनुचित नहीं होगा कि लक्ष्मणसिंहजी ने हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में देखा।

इन परिस्थितियों में गुजराती-भाषी स्वामी दयानंद ने हिंदी अपनाकर यह सिद्ध कर दिया कि उनके हिंदी भाषा में लिखित ग्रंथ साधारण जनता को छू लेंगे। यही कारण है कि उन्हें सुनने और पढ़ने के लिए भारत के विशाल समुदाय ने हिंदी का अध्ययन किया।

'मुझे हिंदी का प्रचार करना है। उसे जन-जन तक पहुँचाना है।' यही सोचकर उन्होंने पत्र-व्यवहार तो हिंदी में किया ही, आर्यसमाज के सभी सभासदों को यह आदेश दिया कि वे लिफ़ाफ़ों पर हिंदी में ही पता लिखा करें। और उनके आदेश का पालन हुआ भी।

इतिहासकारों ने उन पर यह आक्षेप लगाया कि न तो उन्होंने

कहानी-उपन्यास लिखे हैं और न ही नाटक-एकांकी, इसलिए उन्हें साहित्यकार के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। इसमें कोई संदेह नहीं कि वे नाटकों, प्रहसनों और रामलीलाओं के घोर विरोधी थे। लेकिन इसमें भी दो राय नहीं कि भारतेंदु हरिश्चंद्र के सुप्रसिद्ध नाटक 'अंधेर नगरी' का कथ्य दो वर्ष पहले (नाटक लिखे जाने से) स्वामी दयानंद अपनी पुस्तक 'व्यवहार भानु' में इस कथ्य का प्रयोग कर चुके थे। 'व्यवहार भानु' का प्रकाशन वर्ष सन् 1879। भारतेंदुजी ने यह नाटक क्यों लिखा, इसे स्पष्ट करते हुए श्री रामदीन लिखते हैं—'दक्षिण में पारसी और महाराष्ट्र नाटक वाले प्रायः 'अंधेर नगरी' का प्रहसन खेला करते हैं। ऐसा ही हिंदू नेशनल थियेटर ने भी खेलना चाहा था और भारतेंदुजी से अपना आशय प्रकट किया था। भारतेंदुजी ने उस कथा को काव्य में बाँध दिया।'[1]

भारतेंदु नाटक को वहीं समाप्त कर देते हैं जहाँ लोग राजा को टिकटी पर खड़ा करते हैं, परंतु स्वामीजी उसको फाँसी लग जाने के बाद उसके छोटे भाई सुनीति को गद्दी पर बैठाते हैं और उसके 'सुराज' का वर्णन भी करते हैं—

'और जब जिस देशस्थ प्राणियों का सौभाग्य उदय होने वाला होता है तब सुनीति के समान धार्मिक, विद्वान्, पुत्रवत् प्रजा का पालन करने वाली राजसहित सभा और धार्मिक पुरुषार्थी पिता के समान राज संबंध में प्रीतियुक्त मंगलकारिणी प्रजा होती है।'[2]

यह बात कम लोगों को मालूम है कि समवेत स्वर में यही कहा गया भारतेंदु हरिश्चंद्र और 'अंधेर नगरी' एक-दूसरे के पूरक हैं। परंतु किसी ने भी 'व्यवहार भानु' के पन्ने उलटने का कष्ट नहीं किया, क्योंकि किसी ने भी उन्हें साहित्यकार के रूप में प्रतिष्ठित नहीं किया। वे इस बात से आहत थे कि जो इस देश में उत्पन्न होकर अपनी भाषा के सीखने में कुछ भी परिश्रम नहीं करता उससे और क्या आशा की जा सकती है।

पत्र-लेखन हिंदी साहित्य की प्रमुख विधा है, जो संभवतः उस काल में

---

1. भारतेंदु ग्रंथावली, नागरी प्रचारिणी सभा, पृ० 164
2. दयानंद ग्रंथावली, शताब्दी संस्करण, पृ० 769

भी पनप रही थी। आज की दुनिया में पत्र-लेखन को पाठ्यक्रम में सम्मिलित करके उसे प्रशासनिक, व्यावहारिक और कामचलाऊ बना दिया गया है। तब स्वामीजी ने इसके गंभीर महत्त्व को समझा। व्यस्त होने के बावजूद वे समय निकालकर पत्र लिखा करते थे।

स्वामीजी के मन्तव्य को स्पष्ट करने के लिए यहाँ कुछ पत्र दिए जा रहे हैं :

'महाशय माधोलालजी, आनंदित रहो। आर्यसमाज के ठीक नियमों को समझकर आपको वेदांतानुसार सबके हित में अवश्य लग जाना चाहिए। विशेषता से अपने आर्यावर्त देश को सुधारने में अत्यंत श्रद्धा-प्रेम और भक्ति होनी चाहिए। सबको अपने समान जानकर उनके क्लेशों के काटने और सुखों को बढ़ाने के लिए प्रयत्न और उपाय करना उचित है। सबका हित करना ही परम धर्म है। इसी के प्रचार की वेद में आज्ञा पाई जाती है।

—दयानंद सरस्वती

आज के साहित्यकार ईर्ष्या-प्रमादवश भले ही एक-दूसरे को पत्र न लिखते हों या किसी स्वार्थवश लिखते हों, या एक-दूसरे की टाँग खींचने के लिए लिखते हों, पर पत्र-लेखन तो एक ऐसी अद्भुत विधा है जिसमें व्यक्ति अपने हृदय को परत-दर-परत खोलता चला जाता है और प्यार का दरिया काग़ज़ों में समोता चला जाता है, नितांत निजी जीवन को भी उसमें खोलता चला जाता है। शायद 'मैं' उसमें पूरी तरह डूबा रहता है। इतना तो कविता-कहानी लिखने में भी नहीं होता। अस्तु !

स्वामीजी ने कई विषयों पर अनेक व्यक्तियों को संस्कृत, गुजराती, हिंदी, उर्दू में पत्र लिखे। सरल विषयों को सरल भाषा में और गंभीर विषयों के लिए वे वैसी ही भाषा प्रयुक्त किया करते थे। वेदार्थ के लिए उन्होंने अपने परम विरोधी राजा शिवप्रसाद को जो पत्र लिखा, वह इस प्रकार है—

राजा शिवप्रसादजी, आनंदित रहो।

आपका पत्र मेरे पास आया। देखकर अभिप्राय जान लिया। इसके देखने से मुझको निश्चित हुआ कि आपने वेदों से ले के पूर्वमीमांसा-पर्यंत

विद्या पुस्तकों के मध्य में से किसी भी पुस्तक के शब्दार्थ संबंधों को नहीं जाना है। इसलिए आपको मेरी बनाई भूमिका का अर्थ भी ठीक-ठीक विदित न हुआ। जो मेरे पास आ के समझते तो कुछ-कुछ समझ सकते। परंतु जो आपको अपने प्रश्नों के प्रत्युत्तर सुनने की इच्छा हो तो स्वामी विशुद्धानंद सरस्वती व बालशास्त्रीजी को खड़ा करके सुनिएगा तो भी आप कुछ समझ सकेंगे। भला विचार तो कीजिए कि आप उन पुस्तकों को पढ़े बिना वेद और ब्राह्मण पुस्तकों का कैसा आपस में संबंध, क्या-क्या उनमें है और स्वतः प्रमाण तथा ईश्वरोक्त वेद और परतः प्रमाण और ऋषि-मुनिकृत ब्राह्मण पुस्तक है। इन हेतुओं में क्या-क्या सिद्धांत सिद्ध होते हैं और ऐसे हुए बिना क्या-क्या हानि होती है, इन विद्या-रहस्य की बातों को जाने बिना आप कभी नहीं समझ सकते।

(सं० 1936, सप्तमी, शनिवार, सन् 1879)
—दयानंद सरस्वती

ओ३म्

श्रीयुत माननीयवर महाराजे श्री प्रतापसिंहजी,
आनंदित रहो।

यह पत्र बाबा साहब को भी दृष्टिगोचर करा दीजिए।

1. मुझे इस बात का बहुत शोक होता है कि श्रीमान योधपुराधीश आलस्य आदि में वर्तमान, आप और बाबा साहब दोनों रोगयुक्त शरीर वाले हैं। अब कहिए इस राज्य का कि जिसमें सोलह लाख से ऊपर मनुष्य बसते हैं, उनकी रक्षा और कल्याण का बड़ा भार आप लोग उठा रहे हैं। सुधार और बिगाड़ भी आप पर निर्भर है। तथापि आप लोग अपने शरीर का आरोग्य-संरक्षण और आयु बढ़ाने के काम पर बहुत कम ध्यान देते हैं। यह कितनी बड़ी शोचनीय बात है। मैं चाहता हूँ कि आप लोग अपनी दिनचर्या मुझसे सुनकर सुधार लेवें। जिससे मारवाड़ तो क्या, अपने आर्यावर्त देश-भर का कल्याण करने में आप लोग प्रसिद्ध होवें। आप जैसे योग्य पुरुष जगत् में बहुत कम जन्मते हैं और जन्म के भी बहुत कम चिरंजीवी शतायु होते हैं। इसके हुए

बिना देश का सुधार कभी नहीं होता। उत्तम पुरुष जितना अधिक जीवें उतनी ही देश की उन्नति होती है। इस पर ध्यान आप लोगों को अवश्य देना चाहिए। आगे जैसी आप लोगों की इच्छा होवे वैसे कीजिए।

2. आगे जो यह सुना जाता है कि आगामी सोमवार के दिन यहाँ के लालजी आदि की मेरे साथ बातचीत होने वाली है, उसमें आपकी सम्मति है या नहीं ? यदि सम्मति है तो सायंकाल के सात बजे से साढ़े आठ बजे तक सभा में बराबर उपस्थित होंगे या नहीं ? जो आप या बाबा साहब उचित समय सभा में उपस्थित न रहेंगे तो मैं भी इन स्वार्थी व देश के बिगाड़ने वाले पुरुषों के साथ वाद करने के लिए उपस्थित न होऊँगा। कारण यह है कि उनमें सभ्यता की रीति बहुत कम देखने में मिलती है। और पक्षपात भी अधिकतर है। एक आपको छोड़कर अन्य पुरुष भी समय पर सभा में निष्पक्षपाती होकर सत्य बोलने वाला अब तक मेरी दृष्टि में नहीं आया है। इससे आपका उस सभा में उपस्थित रहना अत्यंत उचित समझता हूँ।

3. यदि सोमवार को शास्त्रार्थ कराने की इच्छा हो तो कल सायंकाल सात बजे से लेकर आठ बजे तक उसके नियम एक दिन पहले अवश्य बन जाने चाहिए कि जिससे दूसरे दिन बराबर शास्त्रार्थ चले। इसलिए लालजी को कल सायं बुलवा लेना चाहिए।

4. इस पोप लीला की निवृत्ति करके यहाँ से अन्यत्र यात्रा करने का मेरा इरादा है। अनुमान है कि बाबा साहब ने आपसे कह भी दिया होगा।

इन उपरिलिखित सब बातों का उत्तर लेखपूर्वक आज सायंकाल तक मेरे पास भिजवा देवें।

मिति आश्विन बदी 3 शनि, सं० 1940

—दयानंद सरस्वती

इस पत्र में स्वामीजी जहाँ शिष्टाचार का निर्वाह करते हैं वहाँ स्वाभिमान की भी रक्षा करते हैं। वे कहीं भी गिड़गिड़ाते दिखाई नहीं देते। वे अपना वर्चस्व बनाए रख राजाजी से पूछते हैं कि वे सभा में बराबर उपस्थित होंगे या नहीं। वे कहीं नहीं लिखते कि कृपया अपनी उपस्थिति से कृतार्थ करें।

ओ३म्

श्रीयुत भारतमित्र संपादक महाशय निकटे निवेदनम्।

महाशय, आपके संवत् 1940 आषाढ़ सुदी 8 गुरुवार के छपे हुए पत्र में किसी ने वेद पर आक्षेप-पत्र छपवाया है। उस लेखक का अभिप्राय यही विदित होता है कि वेद ईश्वर की वाणी और अभ्रांत नहीं है। परंतु इस प्रश्न के करने वाले ने प्रश्न मात्र ही किया है, अपनी प्रतिज्ञा को सत्य करने के लिए कोई विशेष हेतु नहीं लिखा है। जैसे कोई कहे कि यह एक हज़ार रुपयों की थैली सच्ची नहीं। दूसरे ने उससे पूछा—क्या मैं तुम्हारे कहने मात्र से थैली को झूठी मान सकता हूँ ? जब तक तुम झूठा रुपया इसमें से एक भी निकाल के सिद्ध नहीं कर देते, तब तक मैं थैली को झूठा नहीं मानूँगा। वैसा ही दोनों महाशयों का आलेख है। यहाँ उनको योग्य था और है कि किसी एक वा अनेक मंत्रों को अपने अभिप्राय के अर्थ सहित वेद, अध्याय, मंत्र संख्यापूर्वक लिखकर पश्चात् कहते कि वेद ईश्वर की वाणी और अभ्रांत नहीं है, तो प्रत्युत्तर के योग्य प्रश्न होता। अब भी यदि उत्तर जानने की इच्छा हो तो इसी प्रकार करें, नहीं तो कुछ भी नहीं है। इसलिए प्रश्नकर्ताओं को उचित है कि पूर्वोक्त प्रकार से चारों वेदों में से जो कोई एक मंत्र भी भ्रांत प्रतीत हो वह आपके पत्र में छपवाएँ। उनका उत्तर भी आपके पत्र में उस समय छपवा दिया जाएगा। और उनको वेद के निर्भ्रांत होने के जानने की पक्की जिज्ञासा हो तो मेरी बनाई 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' को देख लेवें। यदि उनके पास न हो तो वैदिक मंत्रालय, प्रयाग से मँगाकर देखें। और जो उनको आर्य भाषा का पूरा ज्ञान न हो तो किसी सत्यवक्ता दुभाषिये पुरुष से सुनें। इस पर जो उनकी शंका रह जाए तो मुझसे समक्ष मिल के जितनी शंका हो उन सबका यथावत् समाधान लेवें।...मैं ईश्वर नहीं किंतु ईश्वर का उपासक हूँ। परंतु वेद मनुष्यों के हितार्थ परमात्मा ने प्रकाशित किए हैं। इस अभिप्राय से कि जहाँ तक मनुष्य की विद्या और बुद्धि पहुँच सकेगी इतने तक कार्य मनुष्य कर सकेंगे। इसलिए यावत मेरी बुद्धि और विद्या है तावत निष्पक्षपात होकर वेदों का अर्थ प्रकाशित करता हूँ। और वह अर्थ सब सज्जनों के दृष्टिगोचर हुआ है, होता है और होता रहेगा। बड़े शोक की बात है कि आज तक एक

भी दोष देवभाष्य में से कोई भी नहीं निकाल सका है। ऐसी निर्मूल शंका कोई भी किया करें, इससे कुछ भी हानि नहीं हो सकती। इनको तो नास्तिक मत प्रिय लगता है। बहुत-से अख़बारों में छपवाते हैं कि एच०ए० करनेल ऑलकाट साहब ने हज़ारों मनुष्यों को रोगरहित किया। यदि यह बात सत्य है तो मुझको क्यों नहीं दिखलाते और मनवाते ?...मैं प्रसिद्धि से कहता हूँ कि यदि उनमें कुछ भी अलौकिक शक्ति या योगविद्या हो तो मुझको दिखलावें। मैंने जहाँ तक इनकी लीला सिद्धि देखी है, वह मानने के योग्य नहीं थी। अब क्या नई विद्या कहीं से सीख आए ? मुझको तो यह विषय निकम्मा आडंबर रूप दीखता है।

मिति श्रावण बदी 4, संवत् 1940

—दयानंद सरस्वती

[पूर्ण संख्या 211] पत्र (149)

बाबू माधोप्रसादादि, आनंदित रहो !

वृत्तांत यह है कि सब सज्जनों के प्रति एक आनंद का समाचार प्रकट किया जाता है वोह यह है कि एस०एच० अलकाट साहब तथा एच०पी० ब्लेवेस्तकी लेडी जिन की पत्री पहिले अमेरिका से अपने समाजों में आई थी उन से हमारा पहिली मई सन् हाल को सहारनपुर में समागम होने से मालूम हुआ कि जैसी उनकी पत्रियों से बुद्धि प्रकट होती है उनके मिलने से अधिक योग्यता और सज्जनता प्रकट हुई। उनके साथ दो दिन सहारनपुर में समागम रहा और समाज के सब पुरुषों ने यथावत् सत्कार किया। उनका उपदेश सुनने से लोगों के चित्त बड़े प्रसन्न हुए। पश्चात् वे हमारे साथ मेरठ को आए। वहाँ पर भी सब समाज के लोगों ने सुंदर रीति से सत्कार किया और उपदेश का ऐसा सुंदर चरचा रहा कि जिससे सब को आनंद हुआ और उपदेश में सब अमीर वा उमराव तथा अहलकार और अंग्रेज लोग भी पाँच दिन तक बराबर आते रहे और जिस किसी ने मतमतांतर में कुछ शङ्का की उनका यथार्थता से उत्तर मिलता रहा। अर्थात् अमरीकन साहिबों ने सब

मूल पत्र आर्य समाज, दानापुर में सुरक्षित है।

लोगों के चित्त पर यह निश्चय करा दिया कि जितनी भलाई और विद्या है वे सब वेद से निकली और जितने वेदविरुद्ध मत हैं वे सब पाखण्ड रूप हैं पश्चात् उक्त साहिब तो 7 मई को बंबई चले गए और हम कुछ दिन यहाँ पर ठहरेंगे। यह जो उन साहिबों से हमारा समागम है यह इन आर्यावर्तादि देशों के मनुष्यों की उन्नति का कारण है। जैसे एक परम औषध के साथ किसी सुपथ्य का मेल होने से शीघ्र ही रोग नाश हो जाता है इसी प्रकार इस समागम से आर्यावर्तादि देश (में) वेदों का प्रकाश और असत्यरूपी रोग का विनाश शीघ्र हो जावेगा और उक्त साहिबों का आचरण तथा स्वभाव हम को अत्यंत शुद्ध प्रतीत होता है, क्योंकि वे लोग तन मन धन से सब प्रकार वेदमत की स्थापना करने में उद्यत हैं। जो बाबू हरिश्चंद्र चिंतमणि ने उक्त साहिबों के विषय में यह बात उड़ाई थी कि ये लोग जादू जानते हैं और जासूसों की तरह छल कपटी बातें करते हैं उस की यह बात सब मिथ्या है। क्योंकि जिस को जादू कहते हैं वोह यथार्थ में पदार्थ विद्या है उस विद्या को उन्होंने मूर्खों के भ्रम दूर करने और सत्य मार्ग में चलाने के लिए धारण किया है सो कुछ दोष नहीं है परंतु हरिश्चंद्र जैसे मूर्खों को भूषण भी दूषण ही दीख पड़ता है। इस हरिश्चंद्र ने इन साहिबों के चित्त में ऐसा भ्रम किया कि जिस का हम वर्णन नहीं कर सकते परंतु वे सब भ्रम हमारे मिलने से दूर हो गए। देखो इस हरिश्चंद्र की बेईमानी कि बहुत सा विघ्न वेदभाष्य के काम में कर चुका है और अब तक भी करता जाता है, इस लिए सब आर्य्य भाइयों को उचित है कि इस को अपने आर्य्यसमाजों से बहिष्कृत समझें और इस का किसी प्रकार का विश्वास न करें। देखो पूर्वकाल में हमारे ऋषि-मुनियों को कैसी पदार्थ विद्या आती थी कि जिस से आत्मा के बल से सबके अंतःकरण के भेद को शीघ्र ही जान लिया करते थे। जैसे बाहर की पदार्थ विद्या से सिद्ध किए हुए रेल तारादि विद्या को मूर्ख लोग जादू समझते हैं वैसे ही भीतर के पदार्थों के योग से योगी लोग अनेक अद्भुत कर्म कर सकते हैं इस में कोई आश्चर्य नहीं। क्योंकि मनुष्य लोग जितनी विद्या बाहर के पदार्थों से सिद्ध करते हैं उस से कई गुणी अधिक भीतर के पदार्थों से सिद्ध कर सकते हैं। जैसे बाहर के पदार्थों का उपयोग बाहर से होता है वैसे ही भीतर के पदार्थों का उपयोग भीतर से होता है। जैसे स्थूल पदार्थों की क्रिया आँखों से नहीं

देख पड़ती है वैसे सूक्ष्म पदार्थों की क्रिया आँखों से नहीं देख पड़ती, इसी कारण लोग आश्चर्य मानते हैं। हाँ, यह कह सकते हैं कि बहुत से धूर्त लोग उस विद्या को तो जानते नहीं, झूठे जाल रच कर सत्य विद्या को बदनाम करते हैं, इस प्रकार झूठों का तिरस्कार और सच्चों का सत्कार सर्वथा करना चाहिए, परंतु जिस समय किसी का असत्य प्रकट हो जावे, उसी समय उस का परित्याग करना चाहिए। जैसे बहुत दिनों के पश्चात् हरिश्चंद्र का कपट प्रकट होने से अपने आर्य्यसमाजों से बाहर किया गया। इस प्रकार जिस किसी पुरुष का (कपट) प्रकट हो जावे उसको तत्काल ही अपने समाजों से अलग कर दो चाहे कोई क्यों न हो। असत्यवादी की सर्वदा परीक्षा करते रहो। इसी का नाम सुधार है क्योंकि दुद्धेः **फलमनाग्रहः**। जब यही सत्पुरुष का लक्षण है, तब उस को सच्चा ज्ञान हुआ जानो जब अपने निश्चय किसे हुए में भी, जितना असत्य जाने उस को उसी समय त्याग दे। तो उसको दूसरे का असत्य छोड़ने में क्या आश्चर्य है। ऐसे काम के बिना न आप सुधर सकता है और न दूसरे को सुधार सकता है। अब इस पत्र को इस वृत्तांत पर पूर्ण करता हूँ कि इन साहिबों के पूर्व पत्रों और सात दिन बातचीत करने से निश्चय किया है कि इनका तन मन (और) धन सत्य के प्रकाश और असत्य के विनाश और सब मनुष्यों के हित करने में है। जैसा कि आप लोगों का निश्चय (से) उद्योग है। वेदभाष्य अब शीघ्र आने वाला है कुछ चिंता मत करना।

7-5-1879 मेरठ।

(दयानंद सरस्वती)

[पूर्ण संख्या 231] **पत्र (164)**

रामाधार वाजपेयी जी आनंदित रहो !

मुंशी जी ने जो पत्र तुम्हारे पास भेजा उसका उत्तर क्यों नहीं दिया, जो जो पूछें वा मँगवावें उसी समय उत्तर भेज दिया करो। यहाँ व्याख्यान खूब हो रहे हैं। पादरी स्काट साहब से तीन दिन भर बहस हुई उनकी विरुद्ध बातें सब कट गईं सो जब छपेगा तब तुम्हारे पास भी भेजा जायगा। और यहाँ से

चार पाँच दिन के पीछे शाहजहाँपुर आकर वहाँ कुछ ठहर कर तुमको लिखेंगे। जैसा मकान हमारे रहने के लिए किया है, वैसा ही व्याख्यान के लिए भी एक मकान शहर में कर रक्खो, क्योंकि हमारा ठहरना अब थोड़ा थोड़ा ही होगा।

ता० 29 अगस्त।

(दयानंद सरस्वती)

[पूर्ण संख्या 244] पत्र (173)

बाबू माधोलालजी आनंदित रहो !

विदित हो कि 1936 द्वि० आश्विन सुदी 9 गुरुवार ता० 13 अक्तूबर को हम प्रयाग से मिरजापुर आकर सेठ रामरतन के बाग में ठहरे हैं अब तुम लोगों का क्या विचार है। हमारा शरीर बीमार है, परंतु तुम्हारे यहाँ आने को लिख चुके हैं। आना तो होगा ही, व्याख्यान होना, न होना वहाँ आकर मालूम होगा (व्याख्यान न होगा तो तुम लोगों से बातचीत तो अवश्य होगी)। और तुम लोगों ने लिखा था कि हमारे सभासद आप को लेने को आवेंगे सो जो आने का विचार हो तो 6 छः दिन के विच यहाँ मिरजापुर में पूर्वोक्त पते पर आ जावें। क्योंकि कार्तिक वदि प्रतिपदा ता० 30 अक्तूबर को हम यहाँ से चल कर डुमराँव वा आरा अथवा पटना में पहुँचेंगे। इस में संदेह नहीं।

सबसे मेरा नमस्ते।

मिर्जापुर

दयानंद सरस्वती

[पूर्ण संख्या 449] पत्र (299)

चौधरी ठाकर जालिमसिंह जी आनंदित रहो।

मेरा विचार जयपुर में 15 दिनों तक ठहरने का है। पश्चात् अजमेर जाना होगा। यहाँ के मनुष्यों का सुधार असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। बहुत काल में सुधरेंगे तो सुधरेंगे, नहीं तो अधिक बिगड़ जाएँगे। अब देखिए कि जैसी भीमसेन की इच्छा थी वैसा ही 15) रुपये मावारी और 1) रुपैये

हाथ खर्च और खाने में ३) रु० से कम नहीं लगते। इस ने एक महीना कि जब तक उसका मासिक पूरा न हुआ था, तब तक काम भी अच्छा करता था। अब ठीक-ठीक नहीं करता। ये लोग भीतर के मैले और ऊपर के शुद्ध दिखलाई देते हैं। अच्छा, जब तक बनेगा तब तक रखना होगा। बहुत अपराध करेगा तब निकाल देना पड़ेगा। देखिए मैंने इस से कहा था कि जो तेरा भाई रसोई कर सके तो लाना, नहीं (तो) आपके मार्फत रसोइया लाने का कहा था। परंतु लोभ का मारा अपने महामूर्ख जड़ बुद्धि को ले आया। आज इसको रसोई बनाते 15 दिन हो चुके, कुछ भी न आया और न आगे आने की आशा है। आज भी इसने रसोई जला दी। अब आपको मैं लिखता हूँ जो कोई रसोइया चतुर और धर्मात्मा आप की जान में हो तो यहाँ जयपुर में भेज दीजिए। और जो वहाँ न मिल सके तो लिखिए। फिर यहाँ से तजवीज हो जाएगा। सब से मेरा नमस्ते कह दीजिएगा।

मि० चै० शु० 8 गुरुवार सं० 1938, ता० 7 मार्च

(दयानंद सरस्वती) (जयपुर)

[पूर्ण संख्या 450] पत्र (300)

ओ३म्

चौबे कन्हैयालाल जी आनंदित रहो नमस्ते।

विदित हो कि पत्र आप का आया, समाचार विदित हुए। आपने प्रश्न किए सो सब हमारे पुस्तकों में उत्तर सहित लिखे हुए हैं। उन में देखने से सब बातें विदित हो सकती हैं। तुम ने प्रथम ही बार ये प्रश्न किए हैं। इस लिए इस दफे तो सब के उत्तर देते हैं। परंतु आगे हम से प्रश्न करोगे तो हम उत्तर नहीं देंगे, क्योंकि हम को काम बहुत हैं इस कारण से समय बिलकुल नहीं मिलता। उत्तर (1) संध्योपासन और गायत्र्यादि (जप) नित्यकर्म द्विजों अर्थात् तीनों वर्णों के लिए एक ही हैं। तीनों वर्ण गुण-कर्मों से माने जाएँगे, जन्म से नहीं। शूद्र जो विद्यादि गुणों से हीन है इस कारण से उसे संध्योपासन नहीं आ सकता। इसलिए वेद के किसी मंत्र को याद करके जपा करें।

उत्तर (2) कायस्थ अंबष्ठ है, शूद्र नहीं। इस विषय में संक्षेप से लिखा

है। विस्तार पूर्वक शास्त्रों के प्रमाण देकर लिखने को समय नहीं है।

उ० (३) मुसलमानादि अन्य मत वाले वैदिक मत में आवें तो वे जिस वर्ण के गुण और कर्म युक्त हों उसी वर्ण में रह सकते हैं। विवाह और खान-पानादि व्यवहार भी अपने समान वर्ण के साथ करें। आजकल के आर्य्य लोग उन के साथ उक्त व्यवहार नहीं करेंगे, इसलिए अपने लोगों में ही करें और मत वैदिक रक्खें। इस में किसी प्रकार की हानि नहीं हो सकती है।

तुम्हारे प्रश्नों के उत्तर इस प्रकार संक्षेप से दिए हैं। विस्तार पूर्वक हमारे बनाए ग्रंथों में देख लो।

ता० 16 अप्रैल

सं० 1881 ई०

हस्ताक्षर
दयानंद सरस्वती
स्थान जयपुर राजपूताना

[पूर्ण संख्या 457] पत्र (३06)

ओ३म्

सेठ निर्भयराम जी आनंदित रहो।

यह पत्र आप को आवश्यक समझकर इसलिए लिखा जाता है कि आप इसको उपसभा में सब लोगों को सुना देवेंगे। मुंशी कालीचरण रामचरण जी के पत्र से विदित हुआ कि आप लोगों की पाठशाला में आर्य्यभाषा संस्कृत का प्रचार बहुत कम और अन्य भाषा अङ्ग्रेजी वा उर्दू फारसी अधिक पढ़ाई जाती है। इससे वह अभीष्ट जिस्के लिए यह शाला खोली गई है सिद्ध होता नहीं दीखता। वरन आपका यह हज़ारहा मुद्रा का व्यय संस्कृत की ओर से निष्फल होता भासता है। हमने कभी परीक्षा के कागज़ात वा आज तक की पढ़ाई का फल कुछ नहीं देखा। आप लोग देखते हैं कि बहुत काल से आर्य्यावर्त में स्कूल का अभाव हो रहा है। वरन् संस्कृतरूपी मातृभाषा की जगह अङ्ग्रेजी लोगों की मातृभाषा हो चली है। अङ्ग्रेजी का प्रचार तौ जगह-जगह सम्राट की ओर से जिनकी यह मातृभाषा है भले प्रकार हो रहा है। अब इस्की

वृद्धि में हम तुमको इतनी आवश्यकता नहीं दीखती। और न सम्राट के सामने कुछ कर सकते हैं। हाँ, हमारी अति प्राचीन मातृभाषा संस्कृत जिस्का सहायक वर्तमान में कोई नहीं है। और यही व्यवस्था देखकर संस्कृत के प्रचारार्थ आप लोगों ने यह पाठशाला स्थापित की है। तो यह भी उचित कर्तव्य अवश्य है कि सदैव पूर्व इष्ट के सिद्धि पर दृष्टि रक्खी जावै। अब इस के साधनार्थ यह होना चाहिए कि **कुल पठन पाठन समय के छः घण्टों में 3 घण्टे संस्कृत व 2 घण्टे अङ्ग्रेजी और 1 घण्टा उर्दू फारसी पढ़ाई जाया करे।** और प्रति मास संस्कृत की परीक्षा अन्य पण्डितों के द्वारा हुआ करे। और वे प्रश्नोत्तरों के कागज़ात हमारे पास भेजे जाया करें। अभी तक कुछ फल संस्कृत में इस शाला से नहीं लगा। सो इसलिए ऊपर जो कुछ लिखा गया उस्को बर्ताव में लाओ तो अपने अभीष्ट के सिद्ध होने की आशा कर सक्ते हैं। किमधिकं सुज्ञेषु।

आजकल हम ऐसे देश में हैं जहाँ पर इस ऋतु के श्रेष्ठ फल अर्थात् आम पके तो दरकिनार कच्चे भी नहीं मिलते। उस ओर इस्की फसल कैसी हुई है। यदि वहाँ आम फले हों तो एक बार मुंबई आम अथवा और प्रकार के जो तुम्हारी समझ में अच्छे हों दो सौ तीन सौ रेल द्वारा प्रबंध करके भेज दो। परंतु वहाँ से गद्दर आम रवाने करना जिस्से यहाँ पर ठीक-ठीक आन पहुँचे। यदि डाक गाड़ी में रख दोगे तो शायद ठीक रहेगा। हमारे पास जयपुर के मुकाम पर चुरु **सेठों के सरपंच** का पत्र आया कि आप यहाँ पधारें। और लिखा है कि सांभर के रेलघर पर रथ, बहल और ऊँट इत्यादि सवारी भेज देवें अभी तो हमने उनको यही उत्तर लिख दिया है **कि एक अच्छी वर्षा होने पर हम अजमेर से कहीं को रवाना हो सकेंगे। क्योंकि उदयपुर मेवाड़ की तरफ भी हमारे बुलाने का विचार हो रहा है।** यदि उदयपुर को गए तो वह भी आप लोगों को विदित किया जाएगा। शायद इन दोनों स्थानों को जाने में आप से सवारी लेने की आवश्यकता नहीं दीखती। जब जरूरत होगी आपको लिखा जाएगा। पत्र का उत्तर देना। किमधिकम्।

हस्ताक्षर

ज्येष्ठ कृष्ण 11 सं० 1938। दयानंद सरस्वती (अजमेर)

ता० 23 मई, 1881 ई०।

[पूर्ण संख्या 458] पत्र (307)

ओ३म्

लाला मूलराज जी एम०ए० आनंदित रहो।

अर्सा तीन महीने के लगभग व्यतीत हुआ कि हमने आगरे के मुकाम से प्रथम ही गोकरुणानिधि की प्रति आपके पास इस अभिप्रायः से भेज दी हैं कि इस्का बहुत अच्छा तर्जुमा अङ्गरेजी भाषा में कर दीजिए। कि **वह जल्दी छप कर अङ्गरेज राजपुरषों वा सामान्यों के अवलोकनार्थ विलायत तक भी भेजी जावें**। जिस्से इस बड़े धर्म्म कार्य्य में फल प्राप्ति होवै। परंतु मालूम नहीं अब तक उस्के तर्जुमे में क्यों विलंब हुआ। शायद आप भूल गए वा कार्य्य की बहुतायत से यह ढील हुई। ऐसे कार्य्य में आलस्य वा सुस्ती होना अच्छा नहीं। सो अब शीघ्र उक्त काम को पूर्ण करके भेज दीजिए। जयपुर में हम डेढ़ मास तक रहे। यथ(ा) शक्य अच्छा संस्कार वहाँ पर हमने डाल दिया है। ईश्वर चाहे वृद्धि होकर सफल होगा। अब ता० 6 मई से हम यहाँ अजमेर में हैं। सेठ फतेमल जी के बाग की कोठी में ठहरे हैं। प्रति दिन रात को दो घंटे रोज व्याख्यान हो रहा है। हम सब प्रकार यहाँ आनंद में हैं। आप अपनी कुशलता के समाचार भी दीजिएगा। किमधिकम् बहुज्ञेषु।

ता० 28 मई, सन् 1881 ई०।
मिती ज्येष्ठ सुदी 1 सं० 1938।

द०स०
(अजमेर)

[पूर्ण संख्या 460] पत्र (309)

राजा दुर्गाप्रसाद जी आनंदित रहो।

आपका कार्ड आया। समाचार विदित हुए। जयपुर में कुछ थोड़ा सा संस्कार हो गया। और अजमेर में छोटा सा आर्यसमाज नियत हुआ है। ईश्वर करे इसकी वृद्धि हो। हम तारीख 23 जून को गुरुवार को यहाँ से मसूदा को

जो अजमेर से 12 वा 13 वा कोस है, जाएँगे। क्योंकि वहाँ के राव साहब ने बड़ी प्रीतिपूर्वक निमंत्रण किया है। वहाँ अधिक से अधिक 15 दिन तक रहेंगे। आम भेजें तो गादर वा कुछ कच्चे से भेजिए। जिस्से यहाँ पर पकते रहें। क्योंकि पहिले आम जो काशी से आए थे थोड़े काल में अकसर बिगड़ गए थे। सो अब एक ही बार भेज दीजिए। क्योंकि बार-बार तकलीफ होती है। **पाठशाला में संस्कृत का काम ठीक ठीक होना चाहिए।** जैसे मिशन स्कूलों में लड़के अपने अन्य स्वार्थ सिद्धि के लिए बाईबिल सुन लेते हैं और कुछ ध्यान नहीं देते, वैसे जो संस्कृत सुन लिया तो क्या लाभ होगा। **इस पाठशाला में मुख्य संस्कृत जो मातृभाषा है उस्को ही वृद्धि देना चाहिए। वरन फारसी का होना कुछ अवश्य नहीं। केवल संस्कृत और राजभाषा अंगरेजी दो ही का पठन-पाठन होना अवश्य है।** सो आधे-आधे समय दोनों जारी रहें। और दोनों की परीक्षा भी माहवार बड़ी सावधानी और दृढ़ नियम के साथ हुआ करे। और दोनों ही की अपेक्षा से कक्षा वा नंबर की वृद्धि विद्यार्थियों की हुआ करे। और हम को सदैव परीक्षा पत्र भेजा करो। विशेष कर संस्कृत के विद्यार्थियों के माहवार पाठन का ब्यौरा और किस कक्षा में कौन-कौन पुस्तकें पढ़ाई जाती हैं, कितनी-कितनी हुई, यह सब सूचना दिया करो। किमधिकम् विज्ञेषु। विशेषकर आप को लिखेंगे।

मिति आषाढ़ वदी 6 संवत् 1938,
ता० 17 जून, 1881 ई०।

दयानंद सरस्वती
(अजमेर)

[पूर्ण संख्या 461] **पत्र (310)**

ओ३म्

बाबू छेदीलाल जी आनंदित रहो।

जो कागज़ात हमने आगरे में बहुत् पुरुष जो कि हिसाब के जानने वालों की संमति से निश्चित किया है । "वे उड़दू में तो वहाँ आपके पास है। और

जो उनका नक़ल नागरी हमारे पास थी," वह सब आपके पास भेजते हैं। देख विचार ठीक कर जितने उस पर बाकी निकलें हुक्म लिखिए। उस फैसले में जो-जो "उसने" ख्यायानत के अपराध किए हैं, वे भी लिख दीजिए। 1—एक स्वामीजी से विश्वासघात करना। 2—दूसरा हिसाब जैसा मैनेजर को रखना चाहिए वैसा न रखना। 3—तीसरा छापेखाने के स्वामी की आज्ञा के बिना चोरी से अन्य के पुस्तकादि छाप के उसके लाभ का गमन कर जाना। 4—हिसाब देने में झूठे छल "कर" के "अन्यथा" व्यवहार करना। 5—हिसाब "न" देने के लिए झूठे हीले "किया" करना। 6—हिसाब देने के बिना छापेखाने से चले जाना। 7—छापेखाने से जाते समय अपनी 20 गठड़ियों को मास्टर शादीराम को दिखलाए बिना "लेकर" चले जाना। इत्यादि जो-जो हम ने इन कागज़ों पर लिखा है उसको विचारिये। ये सब कागज़ात बखतावर के रजष्टर आदि से जाँच के लिखे हैं। और इसकी नकल उड़दू में भी आगरे के कागज़ों में थी। उस को आप लोगों ने क्यों न देखके क्यों न फैसला कर दिया होता। अब न मुझ से और न बखतावरसिंह से पूछने की अपेक्षा करनी चाहिए। क्योंकि बख० तो ऐसा ही चाहता है कि यह मामला ऐसे ही घसड़ पचड़ हो के रह जाय। इन बखतावर के कागज़ातों को देखने से निश्चित होता है कि (8000) रुपयों से कम गमन और हानि बख० ने नहीं की है। आगे जैसा आप लोगों के ध्यान में आवे वैसा कीजिए। मैं यह आप लोगों से कहता हूँ कि इस मामले में जैसा आप करेंगे वैसा ही मुझको स्वीकार होगा। जो यह हिसाब लिखा है उस से कम डिगरी करनी चाहिए, अधिक नहीं। क्योंकि सत्य व्यवस्था होनी चाहिए। जो बख० सिंह के कर्म्म देखे जाएँ तो जितना उस पर दण्ड करे उतना ही थोड़ा है। परंतु मुझ को आशा है कि आप लोग सत्य ही न्याय करेंगे। "अब जो हम ने जाँच परताल कर उस के कागज़ात से बाकी रुपैये उस से लेने जिस-जिस बाब(त) में जितने जितने रु० निश्चित किए नीचे लिखते हैं।"

1060।) "ये रु० वे हैं कि" जो मासिक हिसाब हमारे पास भेजता था। और बाद इस के शादीराम ने जो मास-मास में खर्च किया उन दोनों के मिलाने से जितने उस ने अधिक खर्च किए हैं।

6971।।।≡) ये रुपए "वे हैं कि" जितने फर्मे मास्टर शादीराम ने अर्थात्

किसी माह में 14 किसी में 15 और किसी में 16 छपवाए और उस बखतावर "सिंह" ने 7 फर्मों से अधिक किसी माह में नहीं छपवाए और काम सरकारी आदमियों से रात-दिन लेता था। चोरी से दूसरों के पुस्तक छपवाता था जैसे कि ला रिपोर्ट, उसके दाम अन्य पुस्तकों के गिने हैं।

300) ये रुपए "वे हैं कि जो कि उसने" टैप आदि के जो कि छापेखाने में थे और कम सौंपे। शीशा सर्कारी, फौंडरी, टैप और ढालने वाले भी सर्कारी थे। और कई एक चीजें वह ले गया। उनका तो पता ही नहीं। तौ भी ऊपर लिखे रु० निकलते हैं।

147—) "ये" रुपए "वे हैं कि" जो उसे संध्यादि पुस्तकें सौंपी थीं और जितनी उस ने दीं "जितनी का खर्च रजष्टर में उसने लिखा है उस से जो" बाकी "रहे उन के दाम इतने" निकलते हैं।

353॥) "ये" रुपए "वे हैं कि जो" भूमिका के "पुस्तक" उसे सौंपी थीं उस के जमा खर्च से "बाकी निकलते" हैं।

442—) "ये" रुपए "वे हैं कि जो" ऋग्वेद के 1286 अं "क उस" को दिए "थे उस से कम दिए अर्थात् जितने उसने रज(ष्ट) र में खर्च में लिखे हैं उस से बाकी के हैं।" और

493।।।≡) "ये" रुपए "वे हैं जो कि" यजुर्वेद के 1437 अंकों के जमा खर्च देखने से उसी पर बाकी निकलते हैं।

सब मिलाकर—

8968।।।≡) रुपए होते हैं।

ये सब रुपये उसी के हाथ के कागज़ातों से उसी पर निकलते हैं। वे कागज़ आपके पास "भी" हैं। और जो उसकी नकल हमारे पास नागरी में थी वह हम भेजते हैं। इसको भी आप लोग देख लीजिए। और इसकी जाँच-पड़ताल उन्हीं रजस्टरादि से जो आपके पास हैं कर लीजिए। और उसके मासिक का रजस्टर अंग्रेजी में है। उसकी नकल भी फारसी में करवा के उस में रखी थी। और सब महीनों की चिट्ठियात भी माहवारी नंबरवार हमने आगरे में कराके उन्हीं कागज़ों में रक्खी हैं। उसमें भी इस ने "जो" जमा नहीं किया वह हमने नहीं छाँटा। "उन चिट्ठियों को आप लोग वहाँ जाँच कर

लीजिए। "इस से उसकी बहुत सी चोरियाँ पकड़ी जाएँगी। आगे जो आपने थियोसोफीष्ट भेजा नोटिस देखने के लिए, सो देखा। क्या किया जाय जिनके लिए उपकार करते हैं, वे ही उलटे विरोध ही करते जाते हैं। अच्छा जो दुष्ट दुष्टता को नहीं छोड़ते तो श्रेष्ठ श्रेष्ठता को क्यों छोड़ें। ये का(ग)जात आप के पास इसलिए भेजे हैं कि लाला रामशरणदास जी नागरी नहीं पढ़े हैं। इन को आप देख के उन को समझा दीजिए। और सब से मेरा आशीर्वा(द) कहिएगा। यहाँ वर्षा बहुत हुई है। प्रतिदिन यहाँ राजमहल में व्याख्यान होते हैं। राजा आदि सब लोग अति प्रीति से सुनते हैं। अब जैसे बने वैसे यह मामला शीघ्र कर दीजिए। किमधिकेन व्यवहारज्ञेषु।

मि० श्रा० व० 9 मंगलवार।

(दयानंद सरस्वती)
(मसूदा) जिले अजमेर।
इसका उत्तर शीघ्र भेजिएगा।"

[पूर्ण संख्या 467] **पत्र (314)**

मेरठ आर्यसमाज मंत्री आनंदीलाल जी आनंदित रहो।

पत्र तुम्हारा आया समाचार विदित हुए। बड़े शोक की बात है कि बखतावरसिंह के मामला के कागज़ातों की सफाई कब करोगे। जो करना हो तो जैसा तुम लोगों को मालूम हो वैसा शीघ्र कर डालो। उस कागज़ात के बिना छापेखाने में भी बहुत हर्कत हैं।

छः सात महीने तो हो चुके फिर कब इस झगड़े को निपटाओगे। और जो के रूपसिंह डाक्तर सिमले ने रुपैये भेजे थे रजिष्टर में जमा कर लिए हैं वा नहीं। थियोसोफिष्ट में जो नोटिस चतुर्भुज का छपा है। सो बुरा है। हम उस का प्रत्युत्तर छपवाना नहीं चाहते, क्योंकि वह अयोग्य और अविद्वान् है। परंतु जो तुम्हारी समझ में आवे सो तुम उसका उत्तर छपवा दो। पंडित भीमसेन वहाँ आर्यसमाज में रखने योग्य नहीं है।। सबसे हमारा नमस्ते कह देना। आजकल हम जिला अजमेर नयानंगर अजमेरी दरवाजे तार बङ्गले में

निवास करते हैं।।

आश्विन वदी 4 रविवार।

(दयानंद सरस्वती)

और थियोसोफिष्ट में जो हमारे वेदभाष्य का नोटिस छपता है उस के अंत में शादीराम का नाम लिखा जाता है। सो अब दयाराम मैनेजर प्रयाग लिखना चाहिए। सो तुम मुंबई थियोसोफिष्ट को लिख देना।

[पूर्ण संख्या 477] **पत्र (319)**

11 नवंबर सन् 81 ई०
गढ़ चित्तौढ़ राज मेवाड़

लाला मूलराज जी आनंदित रहो।

पत्र आपका पहुँचा। समाचार विदित हुआ। परंतु यहाँ हमारे पास कोई इंगलिश का विद्वान् नहीं है। इस वास्ते यहाँ भाषांतर होना असंभव है और जब आप इतना भी पुरुषार्थ नहीं कर सकते तब आर्य समाज की उन्नति किस प्रकार होगी। हम चाहते थे कि किसी प्रकार आप ही इस गोकरुणा-निधि पुस्तक को अंग्रेजी में करें तो बहुत ठीक होता और शीघ्र ही हो जाता, परंतु अभी तक आप को अवकाश नहीं मिला है। किंतु देश उन्नति के वास्ते थोड़ा अवकाश निकालना चाहिए। जब आप लोग कुछ नहीं करेंगे तब हम अकेले क्या कर सकेंगे। जो किसी प्रकार आप से तरजमा न हो सके तो हमारे पास भेज दो। जब हम मुंबई जावेंगे वहाँ इंगलिश के विद्वान् मिलेंगे तब अंगरेजी में करा लेवेंगे जैसा बना होय हाँ भेज दो। **"अब हमारा विचार मुंबई में जाने का है, क्योंकि वहाँ के समाज ने 150) रुपैये भी रेल के खर्च के लिए जबर्दस्ती भेज दिए हैं।"** यहाँ से जब गवर्नर जनरल साहिब दर्बार करके चले जावेंगे तब हम भी मुंबई की तरफ रवाना होवेंगे। "जब वहाँ आने का समय आवेगा तभी आना होगा। क्योंकि काम बड़ा और काम के करने वाले और समय भी थोड़ा। आप लोगों को चाहिए कि जिस जिस देश में आप लोग है वहाँ वहाँ का काम सम्भाल लेवें, तभी उन्नति का बाग

बढ़ेगा।

मि० मार्ग० व० 6 शनि सं० 1938।"

दयानंद सरस्वती

[पूर्ण संख्या 480] पत्र (322)

9 दिसंबर सन् 81 ई०
चित्तौड़गढ़ राज मेवाड़।

लाला मूलराज जी आनंदित रहो।

आपका पत्र आया। समाचार विदित हुआ। आपने जो गोकरुणा-निधि पुस्तक को इंगलिश में भाषांतर कर देना स्वीकार किया उससे बहुत आनंद हुआ। क्योंकि अंगरेजी भाषा होने से अन्य देश वालों को भी लाभ पहुँचेगा। यह तो सच है कि स्वकृत से परकृत निर्बल होता है। तथापि विदेशी भी बहुधा ऐसे हैं कि जैसी इंगलिश भाषा जानते वैसी अन्य भाषा नहीं जानते। और यहाँ के यूरोपियन अस्वीकार करेंगे तो क्या, किंतु यूरोप देशस्थ जब इस पुस्तक को देखेंगे तो अनुमान है कि उन में से भी कई एक सहायक हों। और आप ने जो स्वजाति विषय में लिखा इस वास्ते अपनी स्वजाति का इतिहास जो परंपरा से चला जाता है उसकी थोड़ी सी सूचना लिख भेजें। तब हम अच्छी प्रकार लिख भेजें। और पंजाब में जो हमने थोड़ा सा इतिहास सुना था वह भी विस्मरण हो गया है। इस में विलंब न करना चाहिए। पत्र का उत्तर मुकाम इंदौर राज ह(ो)लकर, बाबू बालाप्रसाद सपरडंट रेलवे पोलिस के नाम से अथवा मुंबई नल बाजर शबिलदास लल्लु भाई के मकान के पास सेवकलाल कृष्णदास (के) नाम से भेजना।

(दयानंद सरस्वती)

[पूर्ण संख्या 483] पत्र (324)

स्वस्ति—श्रीमदनवद्यगुणगणाऽलंकृतेभ्य आर्य्य राजकुल दिवाकरेभ्यो दयानंदसरस्वतीस्वामिन आशिषो भूयासुस्तमामिहास्ति तत्र भवदीयं नित्य-मेधमानं चाशासे। विदित हो कि यह वह पत्र है कि जिसके नीचे श्रीमान् महाशयों के हस्ताक्षर और अपने-अपने राज्य की मुद्रा अर्थात् मोहर होगी इसको सुनहरी कागज में लिखवाना चाहें लिखवा लेवें। मेरी समझ में तो यह इतना ही लेख बहुत है अधिक लिखना न चाहिए। क्योंकि इस लेख में बहुत गूंजास है। और जो इसमें कुछ घटाना बढ़ाना चाहें तो मुझको विदित करके घटावें और बढ़ावें। इस कार्य में जहाँ तक हो सके वहाँ तक शीघ्रता होनी चाहिए। जो-जो श्री मान् महाशय इस पर सही करें वे इस रीत से करें कि इतने लाख अथवा इतने करोड़ मनुष्यों की ओर से मेरे हस्ताक्षर और मोहर है। और अपने-अपने राज्य में जिन-जिन महाशयों को विदित करना चाहें उनको विदित भी कर देवें कि जो कोई गो-हिंसक उनसे पूछे तब वे गोहत्या के बंध करने में सम्मत और दृढ़ रहें। और जैसी सुमगता शीघ्रता जोधपुर, जयपुर, बीकानेर, कोटा, बून्दी, रतलाम, इंदौर, ग्वालियर, बड़ौदा आदि राजे महाराजों से हस्ताक्षर मोहर कराने में आपके करने में होगी वैसी किसी से नहीं हो सकेगी। यह महापुण्य का कार्य है इसलिए किसी एक बुद्धिमान् पुरुष को आप शींघ्र नियुक्त कीजिए कि वह जोधपुर-जयपुराधीशों के इस पर हस्ताक्षर मोहर कराके और सबसे दूसरों की सही कराने के लिए राजस्थानों में जा के सद्यः सही करा लेवे अर्थात् काश्मीर नेपालाधिपतियों की हो जाय तो अत्युत्तम हो। मुझको दृढ़ निश्चय है कि यह महोपकारक काम श्रीमान् आर्य्य राजकुल भास्कर ही के करने योग्य है अन्य किसी के नहीं। और इस महापुण्यकीर्ति के योग्य आप से अन्य किसी को मैं अपनी अल्प प्रज्ञा से नहीं समझता हूँ। और जो आप महाराजे इंदोराधिपति आदि को इस कार्य में प्रेरणा करेंगे तो लश्कर और बड़ौदाधिपतियों की सही होने में विलंब न होगा। अर्थात् जिसकी प्रेरणा से जिस राजा, महाराजा की सही शीघ्र हो सके उसको श्रीमान् महाशय ही प्रेरणा करेंगे। सही होने के पश्चात् में जो-जो महाशय विद्वान् गवर्नर जनरल साहेब बहादुर पारलियामेंट सभा और श्रीमती

राजेश्वरी से इस कार्य की सिद्धि कराने में अति निपुण धार्मिकजनों को नियुक्त करना चाहूँगा। उनके नाम आदि सदाचार आपके विदित कर दूँगा। क्योंकि यह बड़ा भारी काम है और जब गवर्नर जनरल साहेब बहादुर के पास काम चलाया जाएगा तब मैं वहाँ उपस्थित रहूँगा और मुंबई में जाके इस कार्य को शीघ्र करने की नीति में बड़े-बड़े बुद्धिमान् और बारिस्टरों का विचार लिया जाएगा। और जब श्रीमान महाशयों की सही हो जाएगी उसके पश्चात् सरकारी राज्य में से भी रईस और प्रजास्थ लाख 6 मनुष्यों की बहुत शीघ्र सही करा ली जाएगी परंतु इसमें सर्वशिरोमणि योग्य प्रशंसा युक्त श्रीमान् ही रहेंगे। अलमति विस्तरेण लेखनाय राजकुलभास्करेषु। **मैं यहाँ इंदौर आया उसी दिन से महाराजे इंदौर के जज श्रीनिवास आदि सज्जनों ने मुझको रख लिया है और महाराजे के विद्यालय में प्रतिदिन संख्या के 6 छः बजे से लेके 8॥ साढ़े आठ बजे तक वक्तृत्व होता है।** सैकड़ों बुद्धिमान् लोग सुनके प्रसन्न होते हैं। अब तीन चार दिन यहाँ ठहर के मुंबई को जाना चाहता हूँ।

दयानंद सरस्वती

॥ पौष शुक्ल 5 रविवार संवत् 1938, ता० 25 दिसंबर, सन् 1881 ई०।

[पूर्ण संख्या 510] **पत्र (342)**

ओ३म्

श्रीमन्महाराजाधिराजेभ्यः श्रीयुतशाहपुराख्याधीशेभ्यो दयानंदसरस्वती-स्वामिन आशिषो भूयासुस्तमां शमिहास्ति भवदीयं च नित्यमाशासे। जब से आप और मेरा वियोग हुआ तब से अवकाश न मिलने से मैं आपको पत्र नहीं लिख सका। अब इस पत्र के पहुँचने के पश्चात् अपने कुशल क्षेम के समाचार से सुभूषित पत्र भेजिएगा। मैं भी उचित समय पर पत्र भेजा करूँगा, जो आप से और मुझ से गोरक्षा के विषय (में) संवाद हुआ था उस वास्ते **जो एक पत्र और एक चिट्ठी छपवाके श्रीमानार्य्यकुलदिबाकर उदयपुराधीशादि राजे** महाराजों के पास भेजे हैं वे ही श्रीमान् महाराजा-धिराज आपके पास भी दो पत्र भेजते हैं, इसका प्रबंध ऐसा किया है कि

अपने राज्य और मित्रों के राज्य में जो जो ब्राह्मणादि मनुष्य हों उनको सही एक बही में लेके उनकी ओर से राजे महाराजे और प्रधान पुरुष उस छापे के पत्र के नीचे वा बगल में उन सही करनेवालों की संख्या लिख के अपनी सही करें। चित्तौड़ में जो कुछ अच्छी बातें हुईं वे सब श्री मदनवद्य गुणोदार महाराजाधिराजों के पुरुषार्थ ही से हुई और अग्रे होगी। जो राजकुमार पाठशाला की बात हुई थी सो श्रीमदार्यकुलभास्करों ने भी करना स्वीकार कर लिया है। यहाँ मुंबई में भी गोरक्षा के वास्ते सही हो रही है। सब से मेरा आशीर्वाद कहिएगा। अलमतिविस्तरेण महाराजाधिराजवर्य्येषु। मि० चै० शु० वार मंगल संवत् 1939। इसका उत्तर मुंबई में शीघ्र ही लिख भेजिए। मुंबई बालकेश्वर।

(दयानंद सरस्वती)

[पूर्ण संख्या 535] पत्रांश (357)

ओ३म्

बाबू नन्दकिशोरसिंह जी आनंदित रहो।

पत्र तुम्हारा आया, समाचार विदित हुए। जो वहाँ शास्त्रार्थ विषय में लिखा सो आप निश्चय जानों वे हम से शास्त्रार्थ सन्मुख आके कभी न करेंगे। देखो दो तीन बार हम जयपुर में आए और प्रसिद्धि भी कर दी कि जिस पंडित को जिस जिस विषय में शास्त्रार्थ करना हो तो सन्मुख आकर करे। परंतु कोई भी न आया, न किसी ने शास्त्रार्थ किया। अब रहा वहाँ आने का, उस की यह बात है कि जो श्रीमान् महाराजा जी के हस्ताक्षर का पत्र आवेगा तो आना हो सकता है अथवा वहाँ जो सब में अधिक विद्वान् हो उस का रेल खर्च देकर और दो एक अच्छे उत्तम पुरुष पक्षपात रहित हों साक्षी के वास्ते जहाँ हम हों वहाँ लेकर चले आइए अथवा जहाँ होंगे वहाँ से ही अच्छे योग्य पुरुषों को साक्षी कर के जो जो शास्त्रार्थ की बातें होंगी वे सब लिखी जाएँगी। पुनः पत्र द्वारा श्रीमान् महाराजा जी को विदित कर दिई जाएँगी और छपवा कर भी प्रसिद्ध भी होंगी। जिससे सब लोगों को सत्यासत्य विदित हो जाए। यह राजाओं का मुख्य धर्म है कि शास्त्रार्थ कर

कराके सत्यासत्य का निश्चय करना औरों को कराना। **देखो बड़े शोक की बात है कि जयपुर में अनेक गिरजाघर बन गए और पादरी लोग राम कृष्णादि भद्र पुरुषों की निरंतर निंदा करते हैं और सैकड़हों को बहका कर भ्रष्ट कर रहे हैं। उनके हटाने को पंडित वा राजा आदि राजपुरुषों ने कुछ भी प्रयत्न न किया। और जो आप लोगों ने सत्य वेद धर्म की उन्नति होने के वास्ते समाज स्थापित किया है उसकी उन्नति होने में पंडित आदि विघ्नकर्ता होते हैं।** इतने ही से तुम समझ लो कि ये क्या शास्त्रार्थ करेंगे सिवाय परोक्ष में गाल बजाने के। जो कोई तुम से शास्त्रार्थ करने की बात कहे उसको तुम इतना ही उत्तर दो कि लो खर्च आने जाने का हम देते हैं, चलो हमारे साथ स्वामी जी पास शास्त्रार्थ करने को, अथवा तुम राजा जी से प्रबंध कराओ स्वामी जी के बुलाने के वास्ते, हमारे बुलाने से तो आ नहीं सकते। किसी प्रधान पुरुष वा रा(जा) जी की संमति से बुलाइए और शास्त्र(ार्थ) कर सत्य का प्रतिपादन **और असत्य का खंडन कीजिए। हम तो इस में बहुत प्रसन्न हैं,** जो कोई स्वामी जी से शास्त्रार्थ करे तो, क्योंकि हम को भी मालूम हो जाएगा कि क्या सत्य है और क्या झूठ।।

आप भद्र पुरुष लोग इस वेदोक्त सत्यधर्म के विषय में उत्साह पूर्वक दृढ़ निश्चित रहेंगे तो इस समाज की उन्नति करके संसार को फायदा पहुँचा सकोगे, अन्यथा वहाँ उन्नति को प्राप्त होकर फल-प्राप्ति पर्य्यंत पहुँचना कठिन है। क्योंकि वहाँ बड़े बड़े धूर्त लोग हैं। तथापि जो मूर्ख लोग अपनी बुराई को नहीं छोड़ते तो बुद्धिमान् धर्मात्मा लोग अपनी धर्मात्मता को क्यों छोड़कर दुःख सागर में पड़ें। देखिए—

> (निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
> लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
> अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
> न्याय्यात् पथः प्रविचलंति पदं न धीराः)।।

यह कवि का श्लोक है विचार लीजिए।
मि० ज्ये० शु० 14 बुध सं० 1939।

(दयानंद सरस्वती)

[पूर्ण संख्या 750] पत्र (509)

ओ३म्

बाबू विश्वेश्वरसिंह जी आनंदित रहो।

उस बात का स्मरण होगा कि जो तुम ने काशी में मुझ से कहा था कि आप यंत्रालय कीजिए, दो एक वर्ष में पेंशन ले लूँगा, पश्चात् वैदिक यंत्रालय का ही काम करूँगा। क्योंकि यह आर्यावर्त देश भर का उपकार है। अब भी वही निश्चय है वा कोई दूसरा हो गया है। प्रयाग समाचार छपना बंद हो गया वा नहीं। क्योंकि दो सप्ताह की प्रतिज्ञा थी। कभी की हो चुकी है। बंद कर ही दिया होगा। टेप आने की अवधी हो चुकी वा नहीं। अब कब तक आवेगा।

और हमने आज़ मुंशी समर्थदान जी को भी लिखा है कि जिन अक्षरों में भाषा छपती है वे कलकत्ते के 6 टेप बहुत अच्छे हैं। यदि वे भी कुछ मँगवाए जाएँ तो ठीक है वा नहीं ? और वहाँ किसी वकील से पूछ निश्चय कर लिखना कि मुंशी बखतावरसिंह पर नालिश की जाए (तो) प्रयाग में हो सकती है वा नहीं। क्योंकि दो ही ठिकाने हो सकती है। एक जहाँ बात हुई हो वहाँ और दूसरे जहाँ मुद्द (इलेह) होवे। जब वह बात हुई थी तब यंत्रालय काशी में था, अब प्रयाग में है। सो किसी अच्छे वकील से. पूछ के लिखो। और यह भी पूछ के लिखो कि नालिश फौजदारी में करना चाहिए वा दीवानी में। मेरी समझ में और अन्य वकीलों की भी सम्मति है कि दीवानी में करना अच्छा है। सबसे मेरा आशीर्वाद कह देना।

इन सब बातों का प्रत्युत्तर लिखो। श्राव० सु० 12 सं० 1940।

(दयानंद सरस्वती)
जोधपुर राज मारवाड़

[पूर्ण संख्या 752] पत्र (511)

ओ३म्

ठाकुर नंदकिशोर जी आनंदित रहो—

पत्र तुम्हारा श्रावण सुदी 10 का लिखा आया, समाचार विदित हुआ।

मुंशी गंगाप्रसाद बुद्धिमान् दृढ़ोत्साही निर्भय धार्मिक निःशंक था। ऐसे पुरुष का मृत्यु सुनकर जो कि उन को जानते थे, शोक किस को न होगा–

(एति जीवन्तमानन्दः) यह महाभाष्यकार (2। 3। 12) का वचन है, कि जीते हुए पुरुष को आनंद प्राप्त होता है। इस लिए अशोचनीय बात पर शोक करना किसी को उचित नहीं। जो एक अशक्य बात है उस के शोक में वर्तमान और भविष्यत् में हानि के सिवाय दूसरा कुछ भी फल नहीं होता। अस्तु जो हुआ सो हुआ। रहे को सँभालो। और बड़े प्रयत्न प्रीति और दृढ़ोत्साह से आर्यावर्त देश के परम हितकारक सभा के उद्देश्यों को अपने तन मन धन से पूरे करने के लिए सर्वदा उद्यत रहो। सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर सब बातें अच्छी करेगा। **(सत्यमेव जयति नानृतम् ।)** सत्य ही सर्वदा विजयी होता है, झूठ कभी नहीं। इस लिए सर्वदा सत्य की उन्नति में सब जने उद्यत रहें। सब से मेरा आशीर्वाद कह दीजिएगा।

मिती श्रावण शुक्ला 14 शुक्रे संवत् 1940।

(दयानंद सरस्वती)
जोधपुर राज मारवाड़

[पूर्ण संख्या 757] **पत्र (514)**

ओ३म्

मुंशी समर्थदान जी आनंदित रहो।

इसके पूर्व तुम्हारे दोनों पत्रों का उत्तर भेज चुके हैं। और जो गणपाठ के 10 पुस्तक और उसके साथ भाषा भेजी सो पहुँचेगी। तुम थोड़ी सी भाषा देख लिया करो। **यह ज्वालादत्त तो विक्षिप्त पुरुष है।** इस का ध्यान सदा मासिक बढ़ाने पर रहता है, काम बढ़ाने पर नहीं। यद्यपि मैंने सब पुस्तक गणपाठ का नहीं देखा, परंतु भूमिका के पहले पृष्ठ में दृष्टि पड़ी तो दूर दूर के स्थान में (दर 2) अशुद्ध छपा है। ऐसी भाषा को तुम भी देख सकते हो। और अब **यह भाषा भी अच्छी नहीं बनाता, किंतु घास सी काटता है।** इस के नमूने के लिए एक पत्र भेजते हैं जिस की उसने भाषा बनाई है। और बड़ी भूल करी है कि **जिस का पदार्थ है कुछ, और भाषा कुछ बनाई है।**

और भावार्थ संस्कृत के अनुसार और पूरी भाषा भी नहीं बनाई है। तुम प्रत्यक्ष देख लो और उसके सामने दिखला दो। और छः मंत्र की भाषा भी रोज नहीं बनाता। और उस पर भी यह हाल है। यदि यह प्रीति और परिश्रम से काम करता तो इस की उन्नति और हमारी प्रीति क्यों न होती। और अब भी जो अच्छा काम करेगा तो उसके लिए अच्छा होगा। यह तो एक नमूना भेजते हैं। थोड़े दिन के पश्चात् पुराणे बहुत से पत्र इसके भाषा बनाए भेजेंगे। उसमें इसके दोष सैकड़ों दीख पड़ेंगे। बाबू विशेश्वरसिंह ने भी इस के लिए लिखा था कि इस के तीन रुपए मासिक बढ़ा दिया जाए, परंतु यह काम भी करे। ऐसे पुरुष हमारे सामने ही काम दे सकते हैं। और यह भी है कि ऐसे पुरुष हमारे पास रह नहीं सकते। यह पत्र बाबू विशेश्वरसिंह जी को भी दिखला देना। और इस विषय में तुम दोनों जने सम्मति करके लिखो, वैसा किया जाए। इस से जो एक साधारण पुरुष जिस की दृष्टि सच्ची हो वह भी इस से अच्छा छपवा सकता है। और एक तुम को यह लिखते हैं कि जैसा कागज गणपाठ में लगाया है वैसा ही सब साधारण पुस्तकों में लगाया करोगे तो आगे जाकर खर्च की तंगी पड़ जाएगी। इससे जैसा प्रथम लगता था, उसी प्रकार का लगानां चाहिए। न अति उत्तम और न अति उत्कृष्ट (निकृष्ट ?)। और धातुपाठ तथा निघण्टु उणदिगण की सुचि भी बराबर उस के साथ छपे। और जो तुम पत्र लिखते हो उस में एक महीने में इतने फार्म फलाने फलाने पुस्तक के छपे अवश्य लिखा करो। और आज कल वेदभाष्य भी नहीं छपता। सत्यार्थप्रकाश के पत्रे भी शीघ्र शीघ्र नहीं मँगाते हो, जितना कि हम अनुमान करते हैं। इसलिए हर महीनों के फर्मों का हिसाब लिखा करो। बाहर का कुछ काम भी मत लो। हमारे पास छपने को बहुत सी पुस्तकें हैं तुम छापते छापते थक जाओगे, तो भी न चुकेगा।

ऋग्वेद का चौथा अष्टक भी पूरा हो गया। पाँचवें अष्टक का एक अध्याय कल पूरा होगा और छठा मंडल आज पूरा हो गया। परेश्वर की कृपा से 1 वर्ष में सब ऋग्वेदभाष्य पूरा हो जायगा। और एक वा डेढ़ वर्ष साम, और अथर्व में लगेगा। और अब के संस्कारविधि बहुत अच्छी बनाई गई है। और अमावस्या तक बन चुकेगी।

और हम ने कब कहा था कि निघण्टु व्याकरण के पुस्तकों में गिना

जाए। वह वेदाङ्गप्रकाश में गिना जाएगा। क्योंकि निघण्टु मूल और निरुक्त व्याख्यान (वेदाङ्ग) है। इस लिए वेदाङ्गप्रकाश में अवश्य गिणना होगा। और पठन पाठन की व्यवस्था में जो इसका संख्यांक हो वही टाइटल पेज और भूमिका के एक पृष्ठ में धरना।

(दयानंद सरस्वती)

मिती भाद्र बदी 5 सं० 40। जोधपुर राज मारवाड़

[पूर्ण संख्या 763] **पत्र (516)**

ओ३म्

मुंशी समर्थदान जी आनंदित रहो !

पत्र तुम्हारा 29 अगस्त का लिखा आया, समाचार विदित हुआ। और जो तुमने रजिष्टर और दोनों की भाषा और सभा का कृत्य भेजा सो पहुँचा। इस भाषा को देखकर जैसा होगा वैसा लिखा जाएगा। बाबू विशेश्वरसिंह सुख से यंत्रालय में रहैं, उनका घर है। **आज यहाँ से 248 से लेके 278 तक सत्यार्थप्रकाश** और 1810 से लेके 1895 तक ऋग्वेद के पत्रे भाषा बनाने के लिए भेजे हैं। पहुँचने पर ज्वालादत्त को दे देना और रसीद भेज देना। प्रथम सत्यार्थप्रकाश के पत्रे 250 तक तुम्हारे पास भेजे थे और तीन पृष्ठ रामसनेही के विषय के पश्चात् धरे हैं। सो 48-49-50 अंक घटे हैं। तुमको भ्रम न हो। परंतु इतना अवश्य करना कि जो वहाँ 250 पृष्ठ हैं उसके अंत और 248 पृष्ठ के आदि की संगति तुम मिला देना। और 251 के पृष्ठ के आदि और जो अब 250 वा भेजा है उस की सभी संगति मिला लेना। और ग्यारह समुल्लास की समाप्ति तक सब पत्रे भेज दिए हैं। **और इसके अंत में महाराजे युधिष्ठिर से लेके यशपाल तक आर्य राजाओं की वंशावली पीछे से लिखी है**। और उसके पृष्ठों के अंक ठीक ठीक हैं। वैसे ही छाप देना।

और प्रथम तुम जो काम अकेले करते थे उनके लिए अब तीन हो, सो उगाही और तकाजे में आलस्य नहीं करना, परंतु स्मरणार्थ लिखा है। और जो ठाकुर भूपालसिंह 6 अंक बिना मूल्य ले गए हैं और तुम्हारे नोटिस के

पहुँचने पर तुमको इतना भी नहीं की फिर उनका मूल्य न देना वा तुम न लो तो नियम टूटता है। और उन्होंने जो-जो रुपए जब जब दिए हैं, टाइटल पेज पर बराबर छप गए हैं। उस से अधिक न दिए न छपे हैं। और अगष्ट महीने में कितने फार्म छपे सो लिख भेजो। यहाँ वर्षा हो रही है और दो तीन दिन से यहाँ वर्षा अच्छी होती है। अनुमान है कि यह प्रयाग आदि में भी हुई होगी। सब से हमारा आशीर्वाद कह देना।

भाद्र वदी 30 संवत् 1940।

(दयानंद सरस्वती)
जोधपुर (मारवाड़)

मैनेजर भारतमित्र श्रीकृष्ण खत्री ने एक आर्य पंचांग नामक ग्रंथ बनाना चाहा है। उस में आर्यधर्म के प्रयोजन, जिस जिस स्थान पर समाज है, जिस दिन आरंभ हुआ, और जिस दिन वार्षिक उत्सव होता है, और मंत्री का नाम उसमें लिखाना चाहते हैं। सो हमने तुम्हारा नाम लिख दिया है। यदि वह तुम्हारे पास पत्र भेजे तो जहाँ तक तुम जानते हो पूर्वोक्त विषयों में सहाय देना। और जो उन्होंने समाजस्थ पुरुषों की संख्या और हमारा इतिहास भी लिखना चाहा है, सो तो अब इस समय उनको नहीं मिल सकता। और समाजस्थ पुरुषों की संख्या बतलाने में कुछ लाभ नहीं। इसलिए पूर्वोक्त विषयों में जो सहाय माँगे तो दे देना, क्योंकि वह प्रसिद्ध समाचार का संपादक है और उसकी प्रीति भी अधिक दीखती है, चाहें स्वार्थ वा परमार्थ से।

[पूर्ण संख्या 768] **पत्र (519)**

ओ३म्

बाबू विश्वेश्वरसिंह जी आनंदित रहो—

बख्तावरसिंह के समय के रजिस्टर सब प्रयाग में हैं। और चिट्ठी पत्र तथा हिसाब किताब कुछ मेरठ में भी है। यदि अब तक न आया हो तो मंत्री आर्यसमाज मेरठ बाबू आनंदीलाल से मँगा कर वकीलों को दिखला देओ। और प्रबंध शीघ्र करो। कलकत्ते के टेप कितने मँगाना चाहते हो। और उसके

कितने रुपए मन लगेंगे। जब कि प्रथम आए थे तब 40) रुपए मन के दाम लगे थे। इस विषय का सब हाल लिखो। यदि मुंबई के टेपों से कार्य निकल सके तो फिर मँगाना कुछ आवश्यक नहीं।

और यह जो सभा का प्रबंध हुआ है सो बहुत अच्छा है। एक को अधिकार देने में खराबी होती है। और एक को अधिकार न देना। इस सभा में तुम लोग तथा सुंदरलाल जी और हमारी भी पूर्ण सम्मति है। इसलिए जो प्रबंध इसका तुम विचारते हो वही हमने विचारा है। क्योंकि स्वतंत्र अधिकार देने में हानि ही हानि होती है। और लाभ कुछ भी नहीं होता। और तुमने लिखा कि धन के कार्य में किसी को स्वतंत्रता न देनी चाहिए, वह सच है। क्योंकि धन के काम में स्वतंत्रता से लाखों आदमियों में से कोई ही रह सकता है। और यहाँ धन का ही केवल काम नहीं किंतु पुस्तकों का ही बड़ा भारी माल है। जैसे हरिश्चंद्र ने और बख्तावरसिंह ने चोरी से वेदभाष्य के ग्राहक कर लिए थे। और छापेखाने में भी हम को प्रसिद्धि करता था 1000 हजार और छपवाता था 2000 तथा 1500 डेढ़ हजार। और बाहर का चोरी से छपवा लेना। उस का हिसाब कुछ न देना। यदि दिया तो हिसाब में लिया 100 सौ और लिखा 20 बीस। इत्यादि बहुत प्रकार के छापेखाने में काम करते हैं। दो मनुष्यों को जो तुम सभा में बढ़ाना चाहो, हमारी ओर से बढ़ा दो। और पंडित जी की भी सम्मति ले लो। और तुम प्रसन्नता से यंत्रालय में रहो, तुमारा घर है। और मुंशी समर्थदान ने भी हम को लिख भेजा है, वह भी तुमारे रहने से राजी है।

जो पिछला रुपया बाकी है उसका तगादा करना विचारा है, सो अच्छी बात है। परंतु मैं शोक करता हूँ कि जिस काम में मुंशी समर्थदान अकेले रहते थे, तब वसूल और तगादा भी होता था। और जब से पं० शिवदयाल और रामचंद्र रक्खे हैं, तो भी तगादा और वसूल अच्छा नहीं होता। यह अपने देश का अभाग्य है, क्योंकि जितने अधिक होंगे, उतना विरोध करेंगे। और काम ठीक ठीक नहीं करते। इस लिए इन तीनों को समझा दो कि अपना अपना काम प्रीति और उत्साह से करें। विशेष कर पं० शिवदयाल और रामचंद्र को समझाना। समर्थदान तो समझा ही हुआ है। इस कमेटी के विषय में कोई निंदा लिखे, हम कभी नहीं सुनेंगे। हाँ, जो कुछ हमको लिखितव्य होगा, सो पं० सुंदरलाल जी को लिखा करेंगे। ऐसा विचार मत

रक्खो कि इस प्रेस से मैं कुछ न लूँ। क्या घर के माल में से घर के आदमी यथोचित नहीं लेते। जो काम धार्मिक उत्तम मनुष्य से बनता है, वह धन से कभी नहीं होता। जो तुम से यंत्रालय की उन्नति होगी, वह निश्चय है कि लाखों रुपए खर्च करने से भी न होगी। क्योंकि सब पदार्थ संसार में सुलभ हैं, परंतु शुद्ध मनुष्य का मिलना दुर्लभ है। क्या तुम इस द्रव्य को बुरा और अधर्म का समझते हो, जो नहीं लेओ। यह सब उत्तर लिखो। बड़ों बड़ों और छोटों छोटों का कुछ नियम नहीं है। यह तो अपने आत्मा के साथ है। क्योंकि बड़े बड़े तो बिगड़कर तेल के बड़े हो जाएँ और छोटे छोटे सुधरकर बड़े हो जाते हैं।

अब बाकी का तगादा कर जहाँ तक हो सके धन इकट्ठा करो। और पश्चात् 2000) का सामग्री मँगवाओ। यदि उस में कुछ न्यूनता होगी, तो हम दे देंगे। यदि यह सब प्रबंध हो जाए तो पेंशन लेकर यहीं तुम रहना। और जो मासिक पाते हो वही यहाँ मिले। और 10) रुपए वे भी लिए जाएँ तो उस में से प्रतिमास बचाते बचाते बहुत सा धन हो जायगा। और यह निश्चय है कि जहाँ जहाँ जिस-जिस की उन्नति हुई है वह सब सभा ही से हुई है। इस लिए इस की भी उन्नति सभा ही से होगी। इस से यह बहुत अच्छा प्रबंध है। और सबसे हमारा आशीर्वाद कह देना। यहाँ वर्षा बहुत हुई और हो रही है। निश्चय है कि वहाँ भी हुई होगी।

मिति भाद्र सुदी 2 संवत् 1940।

दयानंद सरस्वती
जोधपुर राज मारवाड़

पत्र (523)

[पूर्ण संख्या 772]

ओ३म्

चौधरी जालिमसिंह जी आनंदित रहो।

भीमसेन के दो पत्र आजकल हमारे पास यहाँ आए हैं। विदित होता है कि धक्का खाने पर इस को कुछ बुद्धि आई है। अब आप लिखिए कि जब से यह वहाँ आया, तब से उसका वर्तमान पोपलीला का हुआ वा अच्छा। इस लिखने का प्रयोजन यह है कि फिर भी वह हमारे पास नौकरी करना चाहता

है। और हम को उसके पूर्व चरित्रों से पूरा विश्वास नहीं होता कि यह जैसा लिखता है कि अब मैं सब बात समझ गया। आप से विरोध कभी नहीं करूँगा। आप की सब बातों में मेरा दृढ़ विश्वास हो गया, अब मैं आंप की आज्ञानुसार सदा चलूँगा इत्यादि। परंतु वह छोकरबुद्धि है। यदि उस को रख लें पुनः अनुचित काम करे, निकालना हो तो अच्छी बात नहीं। अब आप लिखिए इस में आप की क्या सम्मति है। क्योंकि मैंने उस के बहुत से उल्टे चरित्र देखे हैं। और इस में अच्छे भी गुण हैं परंतु बुरे गुण ऐसे प्रबल हैं कि अच्छे गुणों को मात कर देते हैं। यदि परमेश्वर की कृपा से उस का स्वभाव सुधर गया हो तो बहुत अच्छी बात है। परंतु जब तक इस पत्र का उत्तर आप भेजेंगे तिस पश्चात् मेरी जैसी सम्मति होगी, वैसी आप को और भीमसेन को लिख दूँगा। देखिए कि बदरी आप को और मुझ को कैसा भलामानस दीखता था। और कैसा दुष्ट निकला। इस लिए उत्तम धार्मिक पुरुषार्थी मनुष्य का सहसा मिलना असंभव नहीं तो दुर्लभ अवश्य है। बड़े भाग्य और परमेश्वर की कृपा से उत्तम पुरुष को उत्तम पुरुष मिलता है। सब से मेरा आशीर्वाद कह दीजिएगा। मुझ को निश्चय है कि आप पक्षपात रहित यथार्थ लिखेंगे।

मिति भाद्र सुदी 4 संवत् 1940।

दयानंद सरस्वती
जोधपुर राज मारवाड़

[पूर्ण संख्या 780] **पत्र (530)**

ओ३म्

बाबू विश्वेश्वरसिंह जी आनंदित रहो !

तुमने लिखा सो ठीक है। इस में चार समाज जो कि प्रयाग के निकट हैं उन से इस बात का नियम कराना चाहिए। हाँ, मेरठ समाज कुछ उन तीनों समाजों से दूर है। तथापि रेल से कुछ दूर नहीं। एक फरक्काबाद, दूसरा मेरठ, तीसरा दानापुर और चौथा लखनऊ। इन चार समाजों के मंत्रियों को इस हमारे पत्र की नकल के साथ लिख भेजो। दो वर्ष में एक बार पारी

आवेगी। क्योंकि छः छः महीने के पश्चात् किसी चार समाजों में से जिसकी पारी हो, वहाँ से धार्मिक उत्तम पुरुष आया करे। वह अंतरङ्ग सभा की सम्मति से आवे। और वह हिसाब में (भी ?) अच्छी तरह से समझता हो। तथापि धार्मिक और देशोन्नति में प्रीति रखने वाला हो। चाहे समाज धर्मार्थ वैदिक यंत्रालय का कितना ही सहाय करे और वास्तव में समाजों ही के प्रताप से वैदिक यंत्रालय बना है तथापि समाज से जो कोई पुरुष आवे उसके आने-जाने और जब तक वहाँ रहे तब तक खाने पीने का खरच भी वैदिक यंत्रालय से दिया जाए। और वर्ष वर्ष में वैदिक यंत्रालय का आय व्यय और पुस्तकों का जमा खर्च भी एक छोटे से पुस्तकाकार में छपके स्वीकार पत्र के (साथ) सब सभासदों और सब आर्य समाजों में भी भेजा जावे। इस से बहुत अच्छी बात रहेगी। और जो कुछ हिसाब में गलती दीखे, वह वैदिक यंत्रालय की प्रबंधकर्तृ प्रयाग सभा को तद्द्वारा मुझको और पंडित सुंदरलाल जी को और उन चार समाजों को विदित किया जाए। उसका उचित प्रबंध करने के लिए प्रयाग की सभा को अपनी सम्मति पूर्वक मैं वा अन्य सब लिख भेजें। और वह सभा यथावत् प्रबंध किया करे। इससे निश्चय है कि प्रबंध अच्छे प्रकार चलेगा। और मुंशी समर्थदान के 27 सत्ताईस तारीख अगष्ठ का उत्तर यही है कि उन्होंने कापी माँगी है और भीमसेन के पत्र की नकल भेजी थी और कापी आज ही भेजते। आज रविवार है रजिस्टरी नहीं होती। इसलिए कल भेजेंगे।

मिति भाद्र सुदी 15 रविवार, संवत् 1940।

दयानंद सरस्वती

जोधपुर राज मारवाड़

[पूर्ण संख्या 786] पत्र (533)

ओ३म्

श्रीयुत बाबू दुर्गाप्रसाद जी आनंदित रहो।

विदित हो कि आप को मैंने बहुत बार कहार के लिए लिखा था। तुम ने कुछ ध्यान नहीं दिया। उस का फल यह हुआ कि एक जाट जिले भरतपुर से दो कोश पूर्व की ओर ग्राम विरोमा साहबराम पोतदार का बेटा और कुंदन

का छोटा भाई कल्लू नाम वाला शाहपुरे में ऐसे ही रख लिया था। वह चोरी कर के भाग गया है। यदि भरतपुर में आपका विशेष संबंध हो तो उस के द्वारा उस चोर का निश्चय करवाइए ! और फिर भी लिखते हैं कि कोई कहार तलाश करके भेजोगे तो अच्छा होगा।

1—आवश्यक बात जिस पर आप को अवश्य ध्यान देना है सो यह कि जो कुछ नगद रुपए पास वा वैदिक यंत्रालय में वर्तमान खर्च से अधिक रहे। वह आप लोग निम्नलिखित छः महाशयों की सभा के प्रबंध में रहें। और जब जब उस में से खर्च करने का आवश्यक होवे तब तब मैं वा वैदिक यंत्रालय के लिए वहीं से खर्च के लिए जाया करे। और इस धन को ॥) सैकड़े ब्याज पर जहाँ कि आप लोगों की सभा की और मेरी सम्मति हो, वहीं रखा जावे। यदि आप लोग निम्नलिखित सब सभासद उचित समझें तो सेठ निर्भयराम जी के दुकान में जमा रहे। और वे ॥) आना सैकड़े ब्याज भी देते हैं। परंतु इस की सँभाल (करने वाला) सभा की ओर से एक मंत्री और एक प्रधान होवे। और सभा उस धन की रक्षा और उन्नति में सदा ध्यान रक्खे। क्योंकि मैं अपने पास शिवाय एक महीना भर के खर्च के अधिक नहीं रखना चाहता। जो अधिक हो वह सभा की सम्मति से लाला निर्भयराम जी के यहाँ जमा हुवा करे और खरच भी वहाँ ही से उठा करे। **जब तक तो मेरा शरीर है तब तक तो कुछ चिंता नहीं, परंतु पश्चात् आप लोगों को अर्थात् सभा को परमार्थ के लिए बड़ा पुरुषार्थ करना होगा।** कि जिस से आर्यावर्त की उन्नति में ये सब पदार्थ लगा करें। और मेरे पश्चात् जो स्वीकार पत्र में प्रधान और सभासद हैं वे सब इस सभा के सभापद गिने जाएँगे। और उसी स्वीकार पत्र के नियम के अनुसार व्यय भी किया जाएगा।

॥ सभा का नाम ॥

आर्यहितैषिणी—

इस के सभासद

1—एक आप

2—दूसरा लाला जगन्नाथप्रसाद

3—लाला निर्भयराम

4—लाला कालीचरण

5—राव बहादुर पं० सुंदरलाल
6—बाबू आनंदीलाल मंत्री आर्यसमाज मेरठ
7—सातवाँ मैं।

इस सभा का दूसरा काम यह भी रहे कि छठे छठे महीने कोई प्रतिष्ठित सभासद वा कोई योग्य पुरुष सभा की सम्मति से भेजा जावे। वह वैदिक यंत्रालय के धन पुस्तक आदि की जाँच पड़ताल करे। उस का सब हिसाब छोटे पुस्तकाकार में छपवा के स्वीकार पत्र के सभापति आदि और मुख्य मुख्य समाज के पास भेज दिया जावे। और मध्य में भी वैदिक यंत्रालय की सभा से जो कि सात पुरुषों की वहाँ नियत हुई है, पत्र द्वारा भी पूछ सके। इसके बिना देखिए अभी च० (400-500) रुपयों की हानि हुई है। और कुछ इधर उधर से 115) और 300) मैंने अपने हाथ से लाला रामसरणदास मेरठ में जमा किए थे, वे गड़बड़ में रहे। इसी प्रकार ऐसे बहुत से व्यवहार हैं कि जिन के लिए यह सभा का प्रबंध होना आवश्यक है। और शरीर सब के अनित्य हैं। इस से यह काम शीघ्र होना चाहिए। पत्र पहुँचते ही इसका प्रत्युत्तर लिखें, क्योंकि मैं यहाँ से अब शीघ्र जाने वाला हूँ। परंतु पाँच 5 दिन पहले एक पत्र और भेजूँगा। यदि इतने में उत्तर यहाँ आ जाए तो अच्छा है। और सबसे मेरा आशीर्वाद कह दीजिएगा।

मिति आश्विन कृष्ण 4 सं० 1940।

(दयानंद सरस्वती)
जोधपुर राज मारवाड़

[पूर्ण संख्या 793] पत्र (535)

ओ३म्

ठाकुर नंदकिशोरसिंह जी आनंदित रहो।

पत्र आपका सभा की ओर से पंडित नंदकिशोर जी के विषय का मिति भा०सु० 9 लिखा आया, समाचार विदित हुआ। पत्र के उत्तर में विलंब इस लिए हुआ कि कुछ समाजों का अभिप्राय विचारणीय विशेष था, इस लिए शीघ्रोत्तर नहीं दिया गया। इतने में आर्य स० अजमेर की जैसी संमति आई

है कि उक्त पंडित जी को सब समाजों के उपदेशक नियत करना चाहिए, वैसी ही सब समाजों की संमति निश्चय जानों। मेरी भी संमति यही है कि किसी एक समाज पर इनके मासिक का भार नहीं दिया जाएगा। और यदि तुमारी सभा में उनके सहाय करने का समय (सामर्थ्य ?) न हो तो कुछ चिंता नहीं। तुमारे समाज को इतना ही भार रहेगा कि जिस समय जैपुर से अन्य समाज को पंडित जो जाएँगे तब रेल का खरच दूसरे समा(ज) तक का देना होगा। और जिस जिस समाज में जाएँगे और जितने दिन रहना होगा, व्याख्यान देंगे और सभासदों को उचित समय में पढ़ावेंगे भी, और मासिक इनका 20) रुपए रहेगा। क्योंकि 2 महीने तक अपने घर का खरच खाएँगे। दश महीने घूमने में उन का खरच खाने पीने में समाज की ओर का लगेगा। इन के मासिक में से कुछ खरच न होगा किंतु 220) रुपए उन के घर के खर्च के लिए समझना चाहिए। और एक वर्ष में दो महीने की छुट्टी अर्थात् तुम्हारे समाज में और अपने घर में रह के उपदेश वा पढ़ाया करें। छुट्टी चाहे तो दो महीने की इकट्ठी ले ले अथवा छः छः महीने में एक एक महीने की। और इनके मासिक के लिए ऐसा प्रबंध किया जाएगा कि प्रति मास उनके घर पे 20) रुपए पहुँचा करेंगे। चाहे किसी समाज की ओर से जाए वा हमारे पास से। इसका प्रबंध हम कर देंगे, जैसा उचित समझेंगे। फिर इसमें कुछ शंका न रहेगी। जिस समाज से जिस समाज तक जाना होगा, वह समाज रेल का व्यय और मार्ग में खाने पीने का भी वही समाज दे दिया करेगा। इतना खरच उठाने में समाज कोई भी निर्बल नहीं है, प्रत्युत सैकड़ों रुपयों का खरच यदि ऐसे ऐसे दश पंडित भी हों तो भी समाज प्रबंध कर सकते हैं, परंतु जब समाज स्वयं समझ लेवेंगे कि पंडित जी एक वर्ष में सब समाजों में एक फेरा लगा आवेंगे। पश्चात् चाहे छोटे से छोटा समाज क्यों न हो, इन का सत्य उत्साह और वक्तृत्व ऐसा है कि बड़े प्रसन्नता के साथ इनका खरच उठा लेंगे। और यदि ऐसे ऐसे पंडित और जैसे स्वामी सहजानंद तथा आत्मानंद सरस्वती जहाँ जाते हैं वहाँ प्राचीन समाज को आनंद और नूतन समाज नित्य होते जाते हैं। उपदेशक मंडली के लिए मेरठ समाज तथा लाहौर समाज ने भी कुछ धन संचय किया है और महाराज राजाधिराज शाहपुरेश ने भी 30) माहवारी नियत किए हैं, परंतु उस में यह नियम किया गया है कि दो

उपदेशक हमारी ओर से रक्खे जाएँ। चाहे 15) 15) के दो चाहे एक (20) का वा एक 10) का रक्खा जावे। यह नियम भी पालन करना आवश्यक है। इसलिए इस पत्र को देखते ही इन सब बातों का स्वीकार हो तो प्रत्युत्तर शीघ्र भेजो। अब हम जहाँ से संवत् 1940 आश्विन बदी 30 अमावस्या के दिन चलके आश्विन सुदी 4 चौथ को अर्थात् 5 अक्तूबर सन् 1883 को मसूदे पहुँच जाएँगे। यदि पंडित को स्वीकार होगा तो मसूदे में उन को बुला लेंगे। और सब समाजों में विदित कर दिया जाएगा कि पं० गौरीशंकर जी को वैदिक मत का उपदेशक नियत किया है। उस के सब नियमपूर्वक हो जाएगा और दो महीने जैपुर के समाज में रहेंगे। उन दो महीनों के दश 10) रुपए जैपुर का समाज दिया करे अर्थात् उनका 25) पच्चीस रुपए माहवारी बना रहेगा। सबसे हमारा आशीर्वाद कह दीजिएगा।

संवत् 1940 मिति आ० बदी 8।

(दयानंद सरस्वती)
जोधपुर राज मारवाड़

[पूर्ण संख्या 800] **पत्र (541)**

ओ३म्

श्रीयुत रावराजा तेजसिंह जी आनंदित रहो।

(1) यहाँ ओषधी का एक पत्र जिस में चोंतिस ओषधियाँ हैं, जिसमें से कई परीक्षित हैं, सो भेजते हैं। आप सम्भाल लीजिए और जो किसी में शंका रहे तो पूछ लीजिए।

(2) आज संध्या को उसी पूर्वोक्त काम के लिए मुंशी जी को भेज दीजिए।

(3) एक चमड़े की बेग जो कि उस चोर ने दो ठिकाने से काट दी है, यदि किसी कारीगर से एक दिन में सुधरवा दें तो आप के पास भेज देवें। परंतु विलंब एक दिन के सिवाय न हो तो, अर्थात् शनिवार को अवश्य मिल

जाए। यदि ऐसा न हो सके तो आगे बनवा लेंगे।

(4) यहाँ से पाली तक सवारी का प्रबंध जैसा आप ने किया हो वैसा किसी पुरुष द्वारा वा पत्र लेख से मुझ को आज विदित कर दें। सवारी का प्रबंध ऐसा होना चाहिए कि जैसे पहिले और तो सब सवारी ठीक थी, परंतु असबाब की गाड़ी के बैल बिगार के थे, बहुत पीछे रह जाती थी। अब के ऐसा न होना चाहिए, किंतु सवारी और असबाब की गाड़ी बराबर चलें और बैल अच्छे जुतवाने चाहिएँ कि सवारी के बराबर चले जाएँ।

(5) अमरदान जी के मुख से सुना कि महाराजे प्रतापसिंह जी ने अमरदान जी से कहा कि हम बारह घण्टों में पाली को पहुँचा देंगे सो आप पूछ के उत्तर लिखिए कि वह क्या सवारी होगी।

(6) जो मेरे साथ के मनुष्य और पुस्तकादि असबाब जावेंगे, उस के साथ आप सुपरीक्षित दो सवार और एक वा दो मेरे साथ। तथा असबाब के साथ पहरा अच्छा भेजना चाहिए। जैसा कि आप के पूजा जाने के पश्चात् मुरदावली और एक दो अच्छे सिपाही का पहरा यहाँ बिना आठ दिन की बदली के रक्खा था, उस का प्रतिफल चोरी हुआ, इसलिए पहरा और सवार (ऐसा) भेजना चाहिए, जो कि होशियारी से पाली तक अच्छे प्रकार पहुँचाए। यह मैंने आपको स्मरण दिलाने के लिए लिखा है। निश्चय है कि आप स्वयं अच्छा प्रबंध करेंगे। इन सब बातों का प्रत्युत्तर आज ही मेरे पास भेज दीजिए।

(7) और जो संध्या का अनुवाद अंग्रेजी का गुटका आप ले गए थे, वह भिजवा ही दीजिए। अलमतिविस्तरेण बुद्धिमद्वर्येषु।

मिति आश्विन बदी 11 बृहस्पतिवार संवत् 1940।

दयानंद सरस्वती
जोधपुर राज मारवाड़

यह ओषधियों का खरड़ा श्रीमान् योधपुराधीश और महाराजे प्रतापसिंह जी को भी दिखला देना।

स्वामीजी की स्वलिखित जीवनी का अंश

"१"

मैं स्वामी दयानन्द सरस्वती संक्षेपसे अपना जन्मचरित्र लिखताहूँ"

संवत १८८१ के वर्षमें मेराजन्म दक्षिण गुजरात प्रान्त देश काठियावाड का मजोकठ देश मोर्वीका राज्य औदीच्य ब्राह्मणके घर में हुआथा, यहां [illegible] निज निवासस्थान मैंने पांचवें वर्षमें देवनागरी अक्षर पढनेका आरम्भ कियाथा। और मुझको कुलकी रीतिकी शिक्षाभी माता पिता आदि कियाकरते थे, बहुत से धर्म शास्त्रादिके श्लोक और सूत्रादिकभी कण्ठस्थ कराया करते थे। फिर ८ आठवें वर्षमें मेरा यज्ञोपवीत कराके गायत्री संध्या और उसकी क्रिया भी सिखादी गई थी। और मुझको यजुर्वेदकी संहिताका आरम्भ कराके उसमेंसे प्रथम रुद्राध्याय पढाया गया था, और मेरे कुलमें शैवमत था उसीकी शिक्षाभी किया करतेथे। और पिता आदि लोग यहभी कहा करते थे कि पार्थिव पूजन अर्थात मट्टीका लिङ्ग बनाके तूं पूजाकर। और माता मने किया करती थी कि यह प्रातःकाल भोजन करलेताहै इससे पूजा नहीं होसकेगी पिताजी हठ किया करते थे कि पूजा अवश्य करनी चाहिये क्योंकि कुलकी रीति है। तथा कुछ २ व्याकरणका विषय और वेदोंका पाठमात्र भी मुझको पढ़ाया करतेथे। पिताजी अपने साथ मुझको जहां तहां मन्दिर और मेल मिलापोंमें लेजाया करते और यहभी कहा करतेथे कि शिवकी उपासना सबसे श्रेष्ठ है। इसप्रकार १४ चौदहवें वर्षकी अवस्थाके आरम्भ तक यजुर्वेदकी संहिता संपूर्ण और कुछ अन्यवेदोंकाभी पाठ पूरा होगयाथा। और शब्दरूपावली आदि छोटे २ व्याकरणके ग्रंथ भी पूरे होगयेथे। पिताजी जहां २ शिवपुराणआदिकी कथा होतीथी वहां २ मुझको पास बैठाकर सुनायाकरतेथे। और घरमें भिक्षाकी जीविका नहीं थी किन्तु जिमीदारी और लेनदेन से जीविकाके प्रबन्ध करके सबकाम चलाते थे। और मेरे पिताने माताके मने करने परभी पार्थिव पूजनका आरम्भ करादियाथा, जब शिवरात्रि आई तब १३ त्रयोदशीकेदिन कथाका माहात्म्य सुनाके शिवरात्रिके व्रत करनेका निश्चय करादिया। परन्तु माताने मने भीकिया कि इससे व्रत नहीं होजायगा तथापि पिताजीने व्रतका आरम्भ करादिया। और जब १४ चतुर्दशीकी सांम हुई तब बड़े २ बस्तीके रईस अपने पुत्रोंके सहित मन्दिरोंमें जागरण करनेकोगये वहां मैंभी अपने पिताके साथ गया और प्रथम प्रहरकी पूजाभीकरी दूसरे प्रहरकी पूजाकरके पूजारिलोग बाहर निकलके सोगये। मैंने प्रथमसे सुनरक्खाथा कि सोनेसे शिवरात्रिका फल नहीं होताहै। इसलिये अपनी आंखोंमें जलके छींटे मारकेजागतारहा और पिताभी सोगये तब मुझको शंका हुई कि जिसकी मैंने कथा सुनी थी वही

इस सच्चान् के काम में विघ्न है क्योंकि मुझ को उनकी सेवा करना उनके साथ घूमने में और धन आदि का प्रबन्ध करना पड़ता

यह महादेव है वा अन्य कोई क्योंकि वह तो मनुष्य के माफक एक देवता है वह बैं
ल पर चढ़ता, चलता फिरता खाता पीता त्रिशूल हाथमें रखता डमरू बजाता वर और
शाप देता और कैलाश का मालिक है इत्यादि प्रकार महादेव कथामें सुनाथा, तब
पिताजी को जगा के मैं ने पूछा कि यह कथा का महादेव है वा कोई दूसरा तब पिता ने कहा कि
क्यों पूछता है। तब मैं ने कहा कि कथा का महादेव तो चेतन है वह अपने ऊपर चूहों को
क्यों चढ़ने देगा और इसके ऊपर तो चूहे फिरते हैं तब पिताजी ने कहा कि कैलाश पर
जो महादेव रहते हैं उनकी मूर्ति बना और आवाहन करके पूजा किया करते हैं अब
कलियुग में उस शिव का साक्षात् दर्शन नहीं होता। इसलिये पाषाणादि की मूर्ति बना
के उन महादेव की भावना रखकर पूजन करने से कैलाश का महादेव प्रसन्न होजाता
है। ऐसा सुनके मेरे मन में भ्रम होगया कि इसमें कुछ गड़बड़ अवश्य है। और भूख
भी बहुत लग रही थी पिता से पूछा कि मैं घर को जाता हूँ। तब उन्हों ने कहा कि सिपाही को
साथ लेके चला जा परन्तु भोजन कदाचित् मत करना मैं ने घर में जाकर माता से कहा
कि मुझको भूख लगी है। माता ने कुछ मिठाई आदि दिया उसको खाकर १ एक बजे पर
सोगया। पिताजी प्रातःकाल रात्रि के भोजन को सुनके बहुत गुस्से हुए कि तैने बहुत बुरा
काम किया। तब मैं ने पिता से कहा कि यह कथा का महादेव नहीं है इसकी पूजा मैं क्यों
करूँ। मन में तो श्रद्धा नहीं रही परन्तु ऊपर के मन पिताजी से कहा कि मुझको पढ़ने
से अवकाश नहीं मिलता कि मैं पूजा कर सकूं। तब माता और चाचा आदि ने भी पिता को
समझाया इस कारण पिता भी शीतल होगये कि अच्छी बात है पढ़ने दो। फिर निघण्टु
निरुक्त और पूर्वमीमांसा आदि शास्त्रों के पढ़ने की इच्छा करके आरम्भ करके पढ़ता
रहा और कर्मकाण्ड विषय भी पढ़ता रहा। मुझ से छोटी १ एक बहन फिर उससे
छोटा एक भाई फिर भी एक बहन और एक भाई अर्थात् दो बहन और दो भाई और
हुए थे तब तक मेरी १६ वर्ष की अवस्था हुई थी पीछे मुझ से छोटी १४ वर्ष की जो बहन थी
उसको हैजा हुआ एक रात्रि में जिस समय नाच हो रहा था। नौकर ने खबर दी कि उसको
हैजा हुआ है। तब सब जने वहां से तत्काल आये और वैद्य आदि बुलाये औषधि भी की त
थापि चार घंटे में उस बहन का शरीर छूट गया सब लोग रोने लगे। परन्तु मेरे हृदय में ऐ
सा धक्का लगा और भय हुआ कि ऐसे ही मैं भी मर जाऊंगा सोच विचार में पड़ गया।

जितने जीव संसार में हैं उनमें से एक भी न बचेगा। इससे कुछ ऐसा उपाय करना

चाहिये कि जिससे यह दुःख छूटे और मुक्ति हो अर्थात इसी समय से मेरे चित्त में वैराग्य की जड़ पड़ गई। परन्तु यह विचार अपने मन में ही रक्खा किसी से कुछ भी न कहा। इतने में १९ वर्ष की जब अवस्था हुई तब जो मुझसे अति प्रेम करने वाले बड़े धर्मात्मा विद्वान मेरे चाचा थे। उनकी मृत्यु होने से अत्यन्त वैराग्य हुआ कि संसार में कुछ भी नहीं परन्तु यह बात माता पिता से तो नहीं कही किन्तु अपने मित्रों से कहा कि मैं गृहाश्रम करना नहीं चाहता। उन्होंने माता पिता से कहा माता पिता ने विचारा कि इसका विवाह शीघ्र कर देना चाहिये। जब मुझको मालूम पड़ा कि ये २० बीसवें वर्ष में ही विवाह कर देंगे तब मित्रों से कहा कि मेरे माता पिता को समझा दो अभी विवाह न करें। तब उन्होंने एक वर्ष जैसे तैसे विवाह रोका तब तक २० बीस नां वर्ष पूरा हो गया। तब मैं ने पिता जी से कहा कि मुझे काशी में भेज दीजिये कि मैं व्याकरण ज्योतिष और वैद्यक आदि ग्रन्थ पढ़ आऊँ। तब माता पिता और कुटुम्ब के लोगों ने कहा कि हम काशी को कभी न भेजेंगे जो कुछ पढ़ना हो सो यहीं पढ़ो। और अगली साल में तेरा विवाह भी होगा क्योंकि लड़की वाला नहीं मानता। और हमको अधिक पढ़ा के क्या करना है जितना पढ़ा है वही बहुत है। फिर मैंने पिता आदि से कहा कि मैं पढ़ कर आऊं तब विवाह होना ठीक है तब माता भी विपरीत हो गई कि हम कहीं नहीं भेजते और अभी विवाह करेंगे। तब मैंने चाहा कि अब सामने रहना अच्छा नहीं। फिर तीन ३ कोश ग्राम में अपनी जिमींदारी थी वहां एक अच्छा पण्डित था माता पिता की आज्ञा ले के वहां जाकर उस पण्डित के पास में पढ़ने लगा। और वहां के लोगों से भी कहा कि मैं गृहाश्रम करना नहीं चाहता। फिर माता पिता ने मुझे बुला के विवाह की तैय्यारी कर दी तब तक २१ इक्कीसवाँ वर्ष भी पूरा हो गया। जब मैंने निश्चित जाना कि अब विवाह किये बिना कदाचित न छोड़ेंगे। फिर गुप चुप संवत १९०३ के वर्ष में घर छोड़ के संध्या के समय भाग उठा, चार कोश पर एक ग्राम था वहां जाकर रात्रि को ठहर कर दूसरे दिन प्रहर रात्रि से उठके १५ कोश चला परन्तु प्रसिद्ध ग्राम सड़क और जानकारों के ग्रामों को छोड़ के बीच २ में नित्य चलने का प्रारम्भ किया। तीसरे दिन मैंने किसी राज पुरुष से सुना कि फलाने का लड़का घर छोड़ कर चला गया था उसको खोजने के लिये सवार और पैदल आदमी यहां तक आ मेये। मेरे पास जो कुछ थोड़े से रुपैये और अंगूठी आदि भूषण था वह सब पोपों ने ठग लिया। कि तुम मुझसे कहा पक्के वैराग्यवान तब होगे कि जब अपने पास की चीज सब पुण्य कर दो फिर उन लोगों

॥४॥

के कहने से मैंने जो कुछ था सब दे दिया। फिर ला भगत की जगह जो कि सायले शहर में
है वहां बहुत साधुओं को सुनकर चला गया वहां एक ब्रह्मचारी मिला उसने मुझसे कहा कि
तुम नैष्ठिक ब्रह्मचारी हो जाओ उसने मुझको ब्रह्मचारी की दीक्षा दी और शुद्धचैत
न्य मेरा नाम रक्खा तथा काषाय वस्त्र भी करा दिये। जब मैं वहां से अहमदा
बाद के पास कोठ गांगड़ जो कि छोटा सा राज्य है वहां आया तब मेरे गाम के पास का जा
न पहचान वाला एक वैरागी मिला उसने पूछा कि तुम यहां कहां से आये और कहां जा
या चाहते हो। तब मैंने उससे कहा कि घर से आया और कुछ देशभ्रमण किया चाहता
हूं। उसने कहा कि तुमने काषाय वस्त्र धारण करके क्या घर छोड़ दिया। मैंने कहा कि
हां मैंने घर छोड़ दिया और कार्तिकी के मेले पर सिद्धपुर को जाऊंगा। फिर मैं वहां से
चलकर सिद्धपुर में आके नीलकण्ठ महादेव की जगह में ठहरा कि जहां दण्डी स्वामी
और ब्रह्मचारी ठहर रहे थे। उनका सत्संग और जो २ कोई महात्मा वा पण्डित मेले में
सुन पड़ा उन सबके पास गया और उनसे सत्संग किया। जो मुझको कोठ गांगड़ में
वैरागी मिला था उसने मेरे पिता के पास पत्र भेजा कि तुम्हारा पुत्र ब्रह्मचारी हुआ काषा
य वस्त्र धारण किये मुझको मिला और कार्तिकी के मेले में सिद्धपुर को गया। ऐसा सुन
के सिपाहियों के सहित पिताजी सिद्धपुर में आकर मेले में खोज कर पता लगा के जहां
पण्डितों के बीच में मैं बैठा था वहां पहुंच के और मुझसे बोले कि तू हमारे कुल में कलंक लगा
नेवाला पैदा हुआ। जब मैंने पिताजी को देख के वहां से उठ के चरण स्पर्श किया और
नमस्कार करके बोला कि आप क्रोधित मत हूजिये मैं किसी आदमी के बहकाने से च
ला आया और मैंने बहुत सा दुःख पाया। अब मैं घर को आने वाला था। परन्तु अब आप आये
यह बहुत अच्छा हुआ कि अब मैं साथ २ घर को चलूंगा। तो भी क्रोध के मारे मे
रे जेरू के रंगे वस्त्र और हस्त के तूंबे को तोड़ फाड़ के फेंक दिये और वहां भी बहुत कठिन बातें कहकर बोले कि तू
अपनी माता की हत्या किया चाहता है। मैंने कहा कि मैं अब घर को चलूंगा तो भी मेरे साथ
सिपाही कर दिये कि क्षण भर भी इसको अकेला मत छोड़ो और रात्रि को भी पहरा
रक्खो। परन्तु मैं भागने का उपाय देख रहा था। सो जब तीसरी रात के तीन बजे के पीछे पह
रे वाला बैठा २ सो गया उसी समय मैं लघुशंका का बहाना करके भागा। आध कोश पर
एक मन्दिर के शिखर की गुफा में एक वृक्ष के सहारे से चढ़ और जल का लोटा भर के छिपकर बैठ
रहा। जब चार बजे का अमल हुआ तब मैंने उन्हीं सिपाहियों में से एक सिपाही मालियों

॥५॥

से मुझको पूछते थे तो सुना तब मैं और भी छिप गया ऊपर बैठा सुनता रहा वे लोग ढूँढ कर चले गये मैं उसी मन्दिर की शिखर में दिनभर रहा जब अंधेरा हुआ तब उस पर से उतर सड़क को छोड़ के किसी से पूछ के दो कोश पर एक ग्राम था उसमें ठहर के अहमदाबाद होता हुआ। बड़ोदरे शहर में आकर ठहरा वहां चेतन मठ में ब्रह्मानन्द आदि ब्रह्मचारी और संन्यासियों से वेदान्त विषय की बहुत बातें की। और मैं ब्रह्म हूं अर्थात् जीव ब्रह्म एक है ऐसा निश्चय उन ब्रह्मानन्दादि ने मुझ को करा दिया प्रथम वेदान्त पढ़ते समय भी कुछ २ निश्चय हो गया था परन्तु वहां ठीक दृढ़ हो गया कि मैं ब्रह्म हूं। फिर वहीं बड़ोदे में एक बनारसी बाई बैरागी का स्थान सुन कर उस में जा के एक सच्चिदानन्द परमहंस से मैं ने अनेक प्रकार की शास्त्र विषयक बातें हुई फिर वहां सुना कि आजकल चाणोद कन्याली में बड़े २ संन्यासी ब्रह्मचारी और विद्वान् ब्राह्मण रहते हैं। वहां जाके दीक्षित और चिदाश्रमादि स्वामी ब्रह्मचारी और पण्डितों से अनेक विषयों का परस्पर संभाषण हुआ। फिर एक परमानन्द परमहंस से वेदान्तसार आर्य्या हरि मीडे तोटक वेदान्तपरिभाषा आदि प्रकरणों का थोड़े महिनों में विचार कर लिया। उस समय ब्रह्मचर्य्यावस्था में कभी २ अपने हाथ से रसोई बनानी पड़ती थी इस कारण पढ़ने में विघ्न विचार के चाहा कि अब संन्यास ले लेना अच्छा है। फिर एक दक्षिणी पण्डित के द्वारा वहां जो एक दीक्षित स्वामी विद्वान् थे उनको कहलाया कि आप उस ब्रह्मचारी को संन्यास की दीक्षा दे दीजिये। क्योंकि मैं अपना ब्रह्मचारी का नाम भी बहुत प्रसिद्ध करना नहीं चाहता था क्योंकि घर का भय बड़ा था जो कि अब तक बना है। तब उन्होंने कहा कि उसकी अवस्था कम है इसलिये हम नहीं देते। इसके अनन्तर दो महिने के पीछे दक्षिण से एक दण्डी स्वामी और एक ब्रह्मचारी आके चाणोद से कुछ कम कोश भर मकान जो कि जंगल में था उसमें ठहरे उनको सुनकर एक दाक्षिणी वेदान्ति पण्डित और मैं दोनों उनके पास जाके शास्त्र विषयक संभाषण करते से मालूम हुआ कि अच्छे विद्वान् हैं। और वे शृंगीरी मठ की ओर से आके द्वारिका की ओर को जाते थे उनका नाम पूर्णानन्द सरस्वती था। उनसे उस वेदान्ति के द्वारा कहलाया कि ये ब्रह्मचारी विद्या पढ़ा चाहते हैं। यह मैं ठीक जानता हूं कि किसी प्रकार का अवगुण इनमें नहीं है इनको आप संन्यास दे दीजिये संन्यास लेने का इनका प्रयोजन यही है कि निर्विघ्न विद्या का अभ्यास कर सकें। तब उन्होंने कहा कि किसी गुजराती स्वामी से कहो क्योंकि हम तो महाराष्ट्र हैं। तब उन से कहा कि दक्षिणी स्वामी गौड़ों को भी संन्यास देते हैं जो यह ब्रह्मचारी तो पंच द्राविड़ है इसमें क्या चिन्ता है। तब उन्होंने

॥६।

मान लिया और उसी ठिकाने तीसरे दिन संन्यास की दीक्षा दण्ड ग्रहण कराया और द-
यानन्द सरस्वती नाम रक्खा परन्तु मैं ने दण्ड का विसर्जन भी उन्हीं स्वामी जी के सन्मुख
कर दिया क्योंकि दंड की भी बहुत सी क्रिया है कि जिससे पढ़ने में विघ्न हो सकता था। फिर
स्वामी जी द्वारिका की ओर चले गये। मैं कुछ दिन चाणोद कन्याली में रह के व्यास आ-
श्रम में एक योगानन्द स्वामी को सुना कि वे योगाभ्यास में अच्छे हैं उनके पास जाके यो-
भ्यास की क्रिया सीख के एक कृष्णशास्त्री छिनौर शहर के बाहर रहते थे उनको सुन के
करण पढ़ने के लिये उनके पास गया और कुछ व्याकरण का अभ्यास करके फिर च-
णोद में आकर ठहरा वहां दो योगी मिले कि जिनका नाम ज्वालानन्द पुरी और शिवानन्द गि-
उनसे भी योगाभ्यास की बातें हुईं और उन्होंने कहा कि तुम अहमदाबाद में आओ वह
नदी के ऊपर दूधेश्वर महादेव में ठहरेंगे। वहां आवोगे तो योगाभ्यास की री-
खलावेंगे। वहां से वे अहमदाबाद को चले गये फिर एक महिने के पीछे मैं भी अह-
दमें जाके उनसे मिला और योगाभ्यास की रीति सीखी। फिर आबूराज पर्वत
गियों को सुनके वहां जाके अर्बुद भवानी आदि स्थानों में भवानीगिरि आदि यो-
से मिल के कुछ और योगाभ्यास की रीति सीख के संवत् १९११ के वर्ष के अन्त मे
र के कुम्भ के मेले में आके बहुत साधु संन्यासियों से मिला और जब तक मेल
बतक चण्डी के पहाड़ के जंगल में योगाभ्यास करता रहा जब मेला हो चुका
केश में जाके संन्यासियों और योगियों से योग की रीति सीखता और सत्संग व
इसके आगे फिर लिखेंगे। दयानन्द सरस्वती.

फिर वहां से एक ब्रह्मचारी और दो पहाड़ी साधु मेरे साथ हुए। हम सब जने टिहरी में आए वहां बहुत साधु और
राज पण्डितों से समागम हुआ। वहां एक पण्डित ने एक दिन मुझे और ब्रह्मचारी को अपने घर में भोजन
करने के लिये निमंत्रण दिया। समय पर उस का एक मनुष्य बुलाने को आया तब मैं और ब्रह्मचारी उस
के घर भोजन करने को गये। जब उसके घर के द्वार में प्रवेश करते थे तो एक ब्राह्मण मांस को काटता था।
उस को देख कर जब भीतर गये तब बहुत से पंडितों को एक सिंहासन के भीतर बैठे देखे और वहां बकरे का
मांस, चमड़ा, और शिर देख के पीछे लौटे। पंडित देख के बोला कि आइये। तब मैंने उत्तर दिया कि आप अ
पना काम कीजिये। हम बाहर जाते हैं। ऐसा कह कर अपने स्थान पर चले आये। तब पण्डित जी हम को बु
लाने आया। उन से मैंने कहा कि तुम मूल समझे जो हमारा ब्रह्मचारी बना लेगा। पंडित बोले कि आप
के लिये तो सब पदार्थ बनाये हैं। मैंने उन से कहा कि आप के घर में मुझ से भोजन कदापि न किया जावेगा। क्योंकि
आप लोग मांसाहारी हैं। और मुझ को मांस देख के ही घृणा आती है। फिर पण्डित ने अन्न भेज दिया। पीछे वहां
कुछ दिन रह कर पण्डितों से पूछा कि इस पहाड़ देश में कौन २ शास्त्र के ग्रन्थ देखने को मिलते हैं। मैं बहुत दे
खना चाहता हूं। तब उन्होंने कहा कि व्याकरण, काव्य, कोष, ज्योतिष, और तन्त्र ग्रन्थ देखने
को मिलते हैं। तब मैंने कहा कि और ग्रन्थ तो मैंने देखे हैं परन्तु तन्त्र ग्रन्थ देखना चाहता हूं। तब उ
न्होंने छोटे बड़े ग्रन्थ मुझ को दिये मैंने देखे तो बहुत भ्रष्टाचार की बातें उन में देखीं कि माता, कन्या, भ
गिनी, चमारी, चांडाली, आदि से संगम करना, नग्न करके पूजना, मद्य, मांस, मच्छी, मुद्रा आदि
पांच आगमों से लेके ब्राह्मण पर्यन्त एकत्र भोजन करना, और इन स्त्रियों से मैथुन करना इन पां
च मकारों से मुक्ति का होना आदि लेख उन में देख के। चित्त को खेद हुआ। जिन्होंने ये ग्रन्थ बनाये
हैं वे कैसे नष्ट बुद्धि थे। फिर वहां से श्रीनगर को जाके केदार घाट पर मन्दिर में रहे। और वहां भी तन्त्र ग्र
न्थों का देखना और पंडितों से इस विषय में संवाद होता रहा। इतने में एक गंगागिरि साधु जो
कि सब दिन पहाड़ में ही रहता था उस से भेंट हुई। और योग विषय में कुछ बात चीत होने से विदि
त हुआ कि यह साधु अच्छा है कई बार उस से बातें हुईं। मैंने उस से पूछा उस ने उत्तर दिया उस ने
मुझ से पूछा उस का उत्तर मैंने दिया। दोनों प्रसन्न होकर दो महीने तक वहां रहे। जब वर्षा ऋतु आ
ई तब आगे रुद्रप्रयागादि देखता हुआ अगस्त्य मुनि के स्थान पर पहुंचा उस के उत्तर प
हाड़ पर एक शिवपुरी स्थान है वहां जा कर चार महीने निवास कर के उन साधु और ब्रह्मचारी
को वहां छोड़ के अकेला केदार की ओर चलता हुआ गुप्त काशी में पहुंचा। वहां कुछ दिन
रह कर वहां से आगे चल के त्रियुगीनारायण के स्थान और गौरीकुण्ड देखता हुआ भीमगुफा दे
ख कर थोड़े दिनों में केदार में पहुंच कर निवास किया वहां कई एक साधु पंडे और केदार के पुजा
री जंगम मत के थे उन से समागम हुआ तब तक पांच छः दिन के पीछे वे साधु और ब्रह्मचारी भी

स्वामीजी की मुद्रित जीवनी का अंश

संवत् 1881 के वर्ष में मेरा जन्म दक्षिण गुजरात प्रांत देश काठियावाड़ का मजोकठा देश मोर्वी का राज्य औदीच्य ब्राह्मण के घर में हुआ था, यहाँ अपना, पिता का और निज निवास स्थान के प्रसिद्ध नाम इसलिए मैं नहीं लिखता कि जो माता-पिता आदि जीते हों मेरे पास आवें तो इस सुधार के काम में विघ्न हो क्योंकि मुझको उनकी सेवा करना उनके साथ घूमने में श्रम और धन आदि का व्यय कराना नहीं चाहता।[1] मैंने पाँचवें वर्ष में देवनागरी अक्षर पढ़ने का आरंभ किया था और मुझको कुल की रीति की शिक्षा भी माता-पिता आदि किया करते थे, बहुत से धर्मशास्त्रादि के श्लोक और सूत्रादि भी कंठस्थ कराया करते थे। फिर आठवें वर्ष में मेरा यज्ञोपवीत कराके गायत्री संध्या और उसकी क्रिया भी सिखा दी गई थी और मुझको यजुर्वेद की संहिता का आरंभ कराके उसमें से प्रथम रुद्राध्याय पढ़ाया गया था और मेरे कुल में शैव मत था उसी की शिक्षा भी किया करते थे। और पिता आदि लोग यह भी कहा करते थे कि पार्थिव पूजन अर्थात् मट्टी का लिंग बना के तू पूजा कर। और माता मने किया करती थी कि यह प्रातःकाल भोजन कर लेता है इससे पूजा नहीं हो सकेगी। पिताजी हठ किया करते थे कि पूजा अवश्य करनी चाहिए क्योंकि कुल की रीति है तथा कुछ-कुछ व्याकरण का विषय और वेदों का पाठ मात्र भी मुझको पढ़ाया करते थे। पिताजी अपने साथ मुझको जहाँ-तहाँ मंदिर और मेल-मिलापों में ले जाया करते थे कि शिव की उपासना सबसे श्रेष्ठ है। इस प्रकार 14 (चौदहवें) वर्ष की अवस्था के आरंभ तक यजुर्वेद की संहिता संपूर्ण और कुछ अन्य वेदों का भी पाठ पूरा हो गया था और शब्द रूपावली आदि छोटे-छोटे व्याकरण के ग्रंथ भी पूरे हो गए थे। पिताजी जहाँ-जहाँ शिव-पुराण आदि की कथा

1. यह संशोधन श्री महाराज ने स्वहस्त से हाशिये पर किया है।

होती थी वहाँ मुझको पास बैठाकर सुनाया करते थे। और घर में भिक्षा की जीविका नहीं थी किंतु जमींदार और लेन-देन से जीविका के प्रबंध करके सब काम चलाते थे। और मेरे पिता ने माता के मने करने पर भी पार्थिव पूजन का आरंभ करा दिया था। जब शिवरात्रि आई तब 13 त्रयोदशी के दिन कथा का माहात्म्य सुना के शिवरात्रि के व्रत करने का निश्चय करा दिया। परंतु माता ने मने भी किया कि इससे व्रत नहीं रहा जाएगा तथापि पिताजी ने व्रत का आरंभ करा दिया। और जब 14 चतुर्दशी की शाम हुई तब बड़े-बड़े बस्ती के रईस अपने पुत्रों सहित मंदिरों में जागरण करने को गए वहाँ मैं भी अपने पिता के साथ गया और प्रथम प्रहर की पूजा भी करी दूसरे प्रहर की पूजा करके पूजारि[1] लोग बाहर निकलके सो गए। मैंने प्रथम से सुन रखा था कि सोने से शिवरात्रि का फल नहीं होता है। इसलिए अपनी आँखों में जल के छींटे मार के जागता रहा और पिता भी सो गए तब मुझको शंका हुई कि जिसकी मैंने कथा सुनी थी वही यह महादेव है व अन्य कोई क्योंकि वह तो मनुष्य के माफक एक देवता है। वह बैल पर चढ़ता, चलता-फिरता, खाता-पीता, त्रिशूल हाथ में रखता, डमरू बजाता, वर और शाप देता और कैलाश का मालिक है इत्यादि प्रकार का महादेव कथा में सुना था, तब पिताजी को जगा के मैंने पूछा कि यह कथा का महादेव है वा कोई दूसरा ? तब पिता ने कहा कि क्यों पूछता है ? तब मैंने कहा कि कथा का महादेव तो चेतन है वह अपने ऊपर चूहों को क्यों चढ़ने देगा और इसके ऊपर तो चूहे फिरते हैं तब पिताजी ने कहा कि कैलाश पर जो महादेव रहते हैं उनकी मूर्ति बना और आह्वान करके पूजा किया करते हैं अब कलियुग में उस शिव का साक्षात् दर्शन नहीं होता। इसलिए पाषाणादि की मूर्ति बनाके उन महादेव की भावना रखकर पूजन करने से कैलाश का महादेव प्रसन्न हो जाता है। ऐसा सुनके मेरे मन में भ्रम हो गया कि इसमें कुछ गड़बड़ अवश्य है। और भूख भी बहुत लग रही थी पिता से पूछा कि मैं घर को जाता हूँ। तब उन्होंने कहा कि सिपाही को साथ लेके चला जा परंतु भोजन कदाचित् मत करना। मैंने घर में जाकर माता से कहा कि मुझको भूख लगी है। माता ने कुछ

1. स्वामीजी मंदिर के पुजारियों को विनोद में पूजारि—पूजा-अरि, पूजा का शत्रु—कहा करते थे।

मिठाई आदि दिया उसको खाकर एक बजे पर सो गया। पिताजी प्रातःकाल रात्रि के भोजन को सुनके बहुत गुस्से हुए कि तैने बहुत बुरा काम किया। तब मैंने पिता से कहा कि यह कथा का महादेव नहीं है इसकी पूजा मैं क्यों करूँ ? मन में तो श्रद्धा नहीं रही परंतु ऊपर के मन पिताजी से कहा कि मुझको पढ़ने से अवकाश नहीं मिलता कि मैं पूजा कर सकूँ तथा माता और चाचा आदि ने भी पिता को समझाया इस कारण पिता भी शांत हो गए कि अच्छी बात है पढ़ने दो। फिर निघंटु निरुक्त और पूर्व मीमांसा आदि शास्त्रों के पढ़ने की इच्छा करके आरंभ करके पढ़ता रहा और कर्मकांड विषय भी पढ़ता रहा। मुझसे छोटी एक बहन फिर उससे छोटा एक भाई फिर भी एक बहन और एक भाई अर्थात् दो बहन और दो भाई और हुए थे तब तक मेरी 16 वर्ष की अवस्था हुई थी। पीछे मुझसे छोटी 14 वर्ष की जो बहन थी उसको हैजा हुआ एक रात्रि में कि जिस समय नाच हो रहा था। नौकर ने खबर दी कि उसको हैजा हुआ है। तब सब जने वहाँ से तत्काल आए और वैद्य आदि बुलाए, औषधि भी की, तथापि चार घंटे में उस बहन का शरीर छूट गया। सब लोग रोने लगे। परंतु मेरे हृदय में ऐसा धक्का लगा और भय हुआ कि ऐसे ही मैं भी मर जाऊँगा। सोच-विचार में पड़ गया। जितने जीव संसार में हैं उनमें से एक भी न बचेगा। इससे कुछ ऐसा उपाय करना चाहिए कि जिससे यह दुःख छूटे और मुक्ति हो अर्थात् इसी समय से मेरे चित्त में वैराग्य की जड़ पड़ गई। परंतु यह विचार अपने मन में ही रखा, किसी से कुछ भी न कहा। इतने में उन्नीस वर्ष की जब अवस्था हुई तब जो मुझसे अति प्रेम करने वाले बड़े धर्मात्मा विद्वान् मेरे चाचा थे उनकी मृत्यु होने से अत्यंत वैराग्य हुआ कि संसार में कुछ भी नहीं परंतु यह बात माता-पिता से तो नहीं कही किंतु अपने मित्रों से कहा कि मेरा मन गृहाश्रम करना नहीं चाहता। उन्होंने माता-पिता से कहा। माता-पिता ने विचारा कि इसका विवाह शीघ्र कर देना चाहिए। जब मुझको मालूम पड़ा कि ये 20 बीसवें वर्ष में ही विवाह कर देंगे तब मित्रों से कहा कि मेरे माता-पिता को समझा दो अभी विवाह न करें। तब उन्होंने एक वर्ष जैसे-तैसे विवाह रोका। तब तक 20 बीसवाँ वर्ष पूरा हो गया। तब मैंने पिताजी से कहा कि मुझे काशी भेज दीजिए कि मैं व्याकरण ज्योतिष और वैद्यक आदि ग्रंथ पढ़ आऊँ। तब माता-पिता और कुटुंब के

लोगों ने कहा कि हम काशी को कभी न भेजेंगे, जो कुछ पढ़ना हो सो यहीं पढ़ो। और अगली साल में तेरा विवाह भी होगा क्योंकि लड़की वाला नहीं मानता। और हमको अधिक पढ़ा के क्या करना है, जितना पढ़ा है वही बहुत है। फिर मैंने पिता आदि से कहा कि मैं पढ़कर आऊँ तब विवाह होना ठीक है। तब माता भी विपरीत हो गई कि हम कहीं नहीं भेजते और अभी विवाह करेंगे। तब मैंने चाहा कि अब सामने रहना अच्छा नहीं। फिर तीन कोस ग्राम में अपनी जमींदारी थी, वहाँ एक अच्छा पंडित था। माता-पिता की आज्ञा ले के वहाँ जाकर उस पंडित के पास मैं पढ़ने लगा। और वहाँ के लोगों से भी कहा कि मैं गृहाश्रम करना नहीं चाहता। फिर माता-पिता ने मुझे बुला के विवाह की तैयारी कर दी। तब तक 21 इक्कीसवाँ वर्ष भी पूरा हो गया। जब मैंने निश्चित जाना कि अब विवाह किए बिना कदाचित् न छोड़ेंगे। फिर गुपचुप संवत् 1903 के वर्ष में घर छोड़ के संध्या के समय भाग उठा। चार कोस पर एक गाँव था, वहाँ जाकर रात्रि को ठहरकर दूसरे दिन प्रहर रात्रि से उठ के 15 कोस चला परंतु प्रसिद्ध ग्राम सड़क और जानकारों के ग्रामों को छोड़ के बीच-बीच में नित्य चलने का प्रारंभ किया। तीसरे दिन मैंने किसी राजपुरुष से सुना कि फलाने का लड़का घर छोड़कर चला गया उसको खोजने के लिए सवार और पैदल आदमी यहाँ तक आए थे। जो मेरे पास थोड़े से रुपए और अँगूठी आदि भूषण था वह सब पोपों ने ठग लिया। मुझसे कहा कि तुम पक्के वैराग्यवान् तब होगे कि जब पास की चीज सब पुण्य कर दो। फिर उन लोगों के कहने से मैंने जो कुछ था सब दे दिया। फिर लाला भगत की जगह जोकि सायले शहर में है वहाँ बहुत साधुओं को सुनकर चला गया। वहाँ एक ब्रह्मचारी मिला। उसने मुझसे कहा कि तुम नैष्ठिक ब्रह्मचारी हो जाओ। उसने मुझको ब्रह्मचारी की दीक्षा दी और 'शुद्ध चैतन्य' मेरा नाम रखा तथा काषाय वस्त्र भी करा दिए। जब मैं वहाँ से अहमदाबाद के पास कौठ गांगड़ जोकि छोटा सा राज्य है वहाँ आया तब मेरे गाम के पास का जान-पहचान वाला एक वैरागी मिला। उसने पूछा कि तुम कहाँ से आए और कहाँ जाना चाहते हो। तब मैंने उससे कहा कि घर से आया और कुछ देश-भ्रमण किया चाहता हूँ। उसने कहा कि तुमने काषाय वस्त्र धारण करके क्या घर छोड़ दिया। मैंने कहा कि हाँ मैंने घर छोड़ दिया और कार्तिकी मेले

पर सिद्धपुर को जाऊँगा। फिर मैं वहाँ से चलकर सिद्धपुर में आ के नीलकंठ महादेव की जगह में ठहरा कि जहाँ दंडी स्वामी और ब्रह्मचारी ठहर रहे थे। उनका सत्संग और जो-जो कोई महात्मा व पंडित मेले में सुन पड़ा उन सबके पास गया और उनसे सत्संग किया। जो मुझको कौठ गांगड़ में वैरागी मिला था उसने मेरे पिता के पास पत्र भेजा कि तुम्हारा पुत्र ब्रह्मचारी हुआ काषाय वस्त्र धारण किए मुझको मिला और कार्तिकी के मेले में सिद्धपुर को गया। ऐसा सुन के सिपाहियों के सहित पिताजी सिद्धपुर में आकर मेले में खोजकर पता लगा के जहाँ पंडितों के बीच में मैं बैठा था वहाँ पहुँचकर मुझसे बोले कि तू हमारे कुल में कलंक लगाने वाला पैदा हुआ। जब मैंने पिताजी की ओर देख के उठ के चरण स्पर्श किया और नमस्कार करके बोला कि आप क्रोधित मत हूजिए, मैं किसी आदमी के बहकाने से चला आया और मैंने बहुत सा दुःख पाया। अब मैं घर को आने वाला था। परंतु अब आप आए यह बहुत अच्छा हुआ कि अब मैं साथ-साथ घर को चलूँगा। तो भी क्रोध के मारे मेरे गेरु के रँगे वस्त्र और एक तंबे को तोड़ फार के फेंक दिया और वहाँ भी बहुत कठिन-कठिन बातें कहकर बोले कि तू अपनी माता की हत्या किया चाहता है। मैंने कहा कि मैं अब घर को चलूँगा तो भी मेरे साथ सिपाही कर दिए कि क्षण भर भी इसको अकेला मत छोड़ो और इस पर रात्रि को भी पहरा रखो। परंतु मैं भागने का उपाय देख रहा था। सो जब तीसरी रात के तीन बजे के पीछे पहरे वाला बैठा-बैठा सो गया उसी समय मैं लघु शंका का बहाना करके भागा। आध कोस पर एक मंदिर के शिखर की गुफा में एक वृक्ष के सहारे से चढ़ और जल का लोटा भर के छिपकर बैठ रहा। जब चार बजे का अमल हुआ तब मैंने उन्हीं सिपाहियों में से एक सिपाही मालियों से मुझको पूछता सुना तब मैं और भी छिप गया। ऊपर बैठा सुनता रहा। वे लोग ढूँढ़कर चले गए, मैं उसी मंदिर की शिखर में दिन भर रहा। जब अँधेरा हुआ तब उस पर से उतर सड़क को छोड़ के किसी से पूछ के दो कोस पर एक ग्राम था उसमें ठहर के अहमदाबाद होता हुआ बड़ोदरे शहर में आकर ठहरा। वहाँ चेतन मठ में ब्रह्मानंद आदि ब्रह्मचारी और संन्यासियों से वेदांत विषय की बहुत बातें कीं। और मैं ब्रह्म हूँ अर्थात् जीव ब्रह्म एक है ऐसा निश्चय उन ब्रह्मानंदादि ने मुझको करा दिया। प्रथम वेदांत पढ़ते समय भी कुछ-कुछ

निश्चय हो गया था परंतु वहाँ ठीक दृढ़ हो गया कि मैं ब्रह्म हूँ। फिर वहीं बड़ोदे में एक बनारसी बाई वैरागी का स्थान सुनकर उसमें जाके एक सच्चिदानंद परमहंस से भेंट करके अनेक प्रकार की शास्त्र विषयक बातें हुईं फिर वहाँ सुना कि आजकल चाणोद कन्याली में बड़े-बड़े संन्यासी, ब्रह्मचारी और विद्वान् ब्राह्मण रहते हैं। वहाँ जाके दीक्षित और चिदाश्रमादि स्वामी ब्रह्मचारी और पंडितों से अनेक विषयों का परस्पर संभाषण हुआ। फिर एक परमानंद परमहंस से वेदांतसार आर्य्या हरिमीड़े तोटक वेदांत परिभाषा आदि प्रकरणों का थोड़े महीनों में विचार कर लिया। उस समय ब्रह्मचर्यावस्था में कभी-कभी अपने हाथ से रसोई बनानी पड़ती थी इस कारण पढ़ने में विघ्न विचार के चाहा कि अब संन्यास ले लेना अच्छा है। फिर एक दक्षिणी पंडित के द्वारा वहाँ जो दीक्षित स्वामी विद्वान् थे उनको कहलाया कि आप उस ब्रह्मचारी को संन्यास की दीक्षा दे दीजिए। क्योंकि मैं अपना ब्रह्मचारी का नाम भी बहुत प्रसिद्ध करना नहीं चाहता था क्योंकि घर का भय बड़ा था जोकि अब तक बना है। तब उन्होंने कहा कि उसकी अवस्था कम है इसलिए हम नहीं देते। इसके अनंतर दो महीने के पीछे दक्षिण से एक दंडी स्वामी और एक ब्रह्मचारी आके चाणोद से कुछ कम कोस-भर मकान जोकि जंगल में था उसमें ठहरे। उनको सुनकर एक दक्षिणी वेदांति पंडित और मैं दोनों उनके पास जाके शास्त्र विषयक संभाषण करने से मालूम हुआ कि अच्छे विद्वान् हैं। और वे शृंगीरी मठ की ओर से आके द्वारिका की ओर को जाते थे। उनका नाम पूर्णानंद सरस्वती था। उनसे उस वेदांति के द्वारा कहलाया कि ये ब्रह्मचारी विद्या पढ़ा चाहते हैं। यह मैं ठीक जानता हूँ कि किसी प्रकार का अपगुण इनमें नहीं है। इनको आप संन्यास दे दीजिए। संन्यास लेने का इनका प्रयोजन यही है कि निर्विघ्न विद्या का अभ्यास कर सकें। तब उन्होंने कहा कि किसी गुजराती स्वामी से कहो क्योंकि हम तो महाराष्ट्र के हैं। तब उसने कहा कि दक्षिणी स्वामी गौड़ों को भी संन्यास देते हैं तो यह ब्रह्मचारी तो पंच द्राविड़ है इसमें क्या चिंता है। तब उन्होंने मान लिया और उसी ठिकाने तीसरे दिन संन्यास की दीक्षा दंड ग्रहण कराया और 'दयानंद सरस्वती' नाम रखा। परंतु मैंने दंड का विसर्जन भी उन्हीं स्वामीजी के सामने कर दिया क्योंकि दंड की भी बहुत सी क्रिया है कि जिससे पढ़ने में विघ्न हो सकता था। फिर वे स्वामीजी द्वारिका की ओर चल गए। मैं कुछ

दिन चाणोद कन्याली में रहके व्यासाश्रम में एक योगानंद स्वामी को सुना कि वे योगाभ्यास में अच्छे हैं, उनके पास जाके योगाभ्यास की क्रिया सीख के एक कृष्ण शास्त्री छिनौर शहर के बाहर रहते थे उनको सुन के व्याकरण पढ़ने के लिए उनके पास गया और कुछ व्याकरण का अभ्यास करके फिर चाणोद में आकर ठहरा। वहाँ दो योगी मिले कि जिनका नाम ज्वालानंदपुरी और शिवानंद गिरि था। उनसे भी योगाभ्यास की बातें हुईं और उन्होंने कहा कि तुम अहमदाबाद में आओ वहाँ हम नदी के ऊपर दूधेश्वर महादेव में ठहरेंगे। वहाँ आवोगे तो योगाभ्यास की रीति सिखलावेंगे। वहाँ से वे अहमदाबाद को चले गए फिर एक महीने के पीछे मैं भी अहमदाबाद में जाके उनसे मिला और योगाभ्यास की रीति सीखी। फिर आबूराज पर्वत में योगियों को सुनके वहाँ जाके अर्वदा भवानी आदि स्थानों में भवानीगिरि आदि योगियों से मिल के कुछ और योगाभ्यास की रीति सीख के संवत् 1911 के वर्ष के अंत में हरिद्वार के कुंभ के मेले में आके, बहुत साधु-संन्यासियों से मिला और जब तक मेला रहा तब तक चंडी के पहाड़ के जंगल में योगाभ्यास करता रहा। जब मेला हो चुका तब ऋषिकेश में जाके संन्यासियों और योगियों से योग की रीति सीखता और सत्संग करता रहा।

इसके आगे फिर लिखेंगे।

दयानंद सरस्वती

फिर वहाँ से एक ब्रह्मचारी और दो पहाड़ी साधु मेरे साथ आए। हम सब जने टिहरी में आए। वहाँ बहुत साधु और राजपंडितों से समागम हुआ। वहाँ एक पंडित ने एक दिन मुझे और ब्रह्मचारी को अपने घर में भोजन करने के लिए निमंत्रण दिया। समय पर उसका एक मनुष्य बुलाने को आया। तब मैं और ब्रह्मचारी उसके घर भोजन करने को गए। जब उसके घर के द्वार में घुस कर के देखा तो एक ब्राह्मण मांस को काटता था। उसको देखकर जब भीतर गए तब बहुत से पंडितों को एक सिमियाने के भीतर बैठे देख और वहाँ बकरे का मांस, चमड़ा और शिर देख के पीछे लौटे। पंडित देख के बोला कि आइए। तब मैंने उत्तर दिया कि आप अपना काम कीजिए। हम बाहर जाते हैं। ऐसा कहकर अपने स्थान पर चले आए। तब पंडित भी हमको बुलाने आया। उनसे मैंने कहा कि तुम सूखा अन्न भेज दो, हमारा ब्रह्मचारी बना लेगा।

पंडित बोले कि आपके लिए तो सब पदार्थ बनाए हैं। मैंने उनसे कहा कि आपके घर में मुझसे भोजन कदापि न किया जावेगा। क्योंकि आप लोग मांसाहारी हैं। और मुझको मांस देखने से घृणा आती है। फिर पंडित ने अन्न भेज दिया। पीछे वहाँ कुछ दिन ठहरकर पंडितों से पूछा कि इस पहाड़ देश में कौन-कौन शास्त्र के ग्रंथ देखने को मिलते हैं। मैं देखना चाहता हूँ। तब उन्होंने कहा कि व्याकरण, काव्य, कोष, ज्योतिष और तंत्र ग्रंथ बहुत मिलते हैं। तब मैंने कहा कि और ग्रंथ तो मैंने देखे हैं परंतु तंत्र ग्रंथ देखना चाहता हूँ। तब उन्होंने छोटे बड़े ग्रंथ मुझको दिए मैंने देखे तो बहुत भ्रष्टाचार की बातें उनमें देखीं कि माता, कन्या, भगिनी चमारी, चांडाली आदि से संगम करना, नग्न करके पूजना। मद्य, मांस, मच्छी, मुद्रा अर्थात् ब्राह्मण से लेके चांडाल पर्यंत एकत्र भोजन करना और उक्त स्त्रियों से मैथुन करना इन पाँच मकारों से मुक्ति का होना आदि लेख उनमें देख के चित्त को खेद हुआ कि जिनने ये ग्रंथ बनाए हैं वे कैसे नष्टबुद्धि थे। फिर वहाँ से श्रीनगर को जाके केदारघाट पर मंदिर में ठहरे और वहाँ भी तंत्र ग्रंथों का देखना और पंडितों से इस विषय में संवाद होता रहा। इतने में एक गंगागिरि साधु जोकि पहाड़ में ही रहता था, उससे भेंट हुई और योग विषय में कुछ बातचीत होने से विदित हुआ कि यह साधु अच्छा है। कई बार उससे बातें हुईं। मैंने उससे पूछा उसने उत्तर दिया उसने मुझसे पूछा उसका उत्तर मैंने दिया। दोनों प्रसन्न होकर दो महीने तक वहाँ रहे। जब वर्षा ऋतु आई तब आगे रुद्र प्रयागादि देखता हुआ अगस्त मुनि के स्थान पर पहुँचकर उसके उत्तर पहाड़ पर एक शिवपुरी स्थान है वहाँ जाकर चार महीने निवास करके पीछे उन साधु और ब्रह्मचारी को वहाँ छोड़ के अकेला केदार की ओर चलता हुआ गुप्त काशी में पहुँचा। वहाँ कुछ दिन रहकर वहाँ से आगे चल के त्रियुगीनारायण का स्थान और गौरीकुंड देखता हुआ भीम गुफा देखकर थोड़े ही दिनों में केदार में पहुँचकर निवास किया। वहाँ कई एक साधु-पंडे और केदार के पुजारी जंगम मत के थे उनसे समागम हुआ तब तक पाँच-छह दिन के पीछे वे साधु और ब्रह्मचारी भी वहाँ आ गए। वहाँ का सब चरित्र देखा फिर इच्छा हुई कि इन बर्फ के पहाड़ों में भी कुछ घूम के देखें कि कोई साधु महात्मा रहता है वा नहीं परंतु मार्ग कठिन और उन पहाड़ों में अतिशीत भी है। वहाँ के निवासियों से भी पूछा कि इन पहाड़ों में कोई साधु महात्मा रहता है वा नहीं उन्होंने कहा

कि कोई नहीं। फिर वहाँ 20 (बीस) दिन रहकर पीछे को अकेला ही लौटा क्योंकि वह ब्रह्मचारी और साधु दो दिन रहकर शीत से घबरा के प्रथम ही चले गए थे फिर मैं वहाँ से चल के तुंगनाथ के पहाड़ पर चढ़ गया। उसका मंदिर पूजारी बहुत सी मूर्ति आदि की सब लीला को देखकर तीसरे पहर वहाँ से नीचे को उतरा। बीच में से दो मार्ग थे एक पश्चिम को और एक पश्चिम और दक्षिण के बीच को जाता था। जो जंगली मार्ग था मैं उसमें चढ़ गया। आगे दूर जाकर देखा तो जंगल पहाड़ और बहुत गहरा सूखा नाला है, उसमें मार्ग बंद हो रहा है। विचारा कि जो पहाड़ पर चढ़े तो रात हो जावेगा पहाड़ का मार्ग कठिन है वहाँ पहुँच नहीं सकता। ऐसा विचार उस नाले में बड़ी कठिनता से घास और वृक्षों को पकड़-पकड़ नीचे उतरकर नाले के किनारे पर चढ़कर देखा तो पहाड़ और जंगल है कहीं मार्ग नहीं। तब तक सूर्य अस्त होने को आया विचारा कि जो रात हो जावेगी तो यहाँ जल अग्नि कुछ भी नहीं है फिर क्या करेंगे। ऐसा विचार कर आगे को बढ़ा जंगल में चलते अनेक ठोकर और काँटे लगे, शरीर के वस्त्र भी फट गए। बड़ी कठिनता से पहाड़ के पार उतरा तब सड़क मिली और अँधेरा भी हो गया। फिर सड़क-सड़क चल के एक स्थान मिला वहीं के लोगों से पूछा कि यह कहाँ की सड़क है कहा कि ओखी मठ की। फिर वहाँ रात्रि को रहकर क्रम से गुप्त काशी को आया वहाँ थोड़ा ठहरकर ओखी मठ में जाकर उसमें ठहर के देखा तो बड़ी भारी पोप लीला बड़े भारी कारखाने। वहाँ के महंत ने कहा कि तुम हमारे चेले हो जाओ यहाँ रहो, लाखों के कारखाने तुम्हारे हाथ हो जावेंगे मेरे पीछे तुम्हीं महंत होंगे। मैंने उनको उत्तर दिया कि सुनो ऐसी मेरी इच्छा होती तो अपने माता, पिता, बंधु, कुटुंब और घर आदि ही को क्यों छोड़ता क्या तुम्हारा स्थान और तुम उनसे भी अधिक हो सकते हो। मैंने जिस लिए सब छोड़े हैं वह तुम्हारे पास किंचिन्मात्र भी नहीं है उसने पूछा कि कह क्या बात है। मैंने उत्तर दिया कि सत्य विद्या, योग, मुक्ति और अपने आत्मा की पवित्रता आदि गुणों से धर्मात्मतापूर्वक उन्नति करना है। तब महंत ने कहा कि अच्छा तुम कुछ दिन यहाँ रहो। मैंने उनको कुछ उत्तर न दिया और प्रातःकाल उठके मार्ग में चल के जोशी मठ को पहुँच के वहाँ के दक्षिणी शास्त्री और संन्यासी थे उनसे मिलकर वहाँ ठहरा।

—दयानंद सरस्वती

यज्ञ का महत्त्व

यज्ञ, संस्कार, विषयक

स्वामी दयानंद सरस्वतीजी का व्याख्यान

ता० 20 जौलाई, सन् 1875 ई०

ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳशान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्ति-रोषधयः शान्ति। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥1॥ य०सं०

यह ऋचा कहकर व्याख्यान का आरंभ किया।

यज्ञ और संस्कार क्या है इसका विचार आज कर्तव्य है।

प्रथम यज्ञ का विचार करें—यज्ञ का अर्थ क्या है ? यज्ञ के साधन कौन-कौन से हैं ? उसकी कृति कैसी है ? और उनके फल कौन-कौन से हैं ? ये प्रश्न उत्पन्न होते हैं। इनके उत्तर अब हम यथाक्रम देते हैं, यज्ञ शब्द के तीन अर्थ हैं—प्रथम देवपूजा, दूसरा संगतिकरण और तीसरा अर्थदान है।

अब प्रथम देवपूजा के विषय में विचार करें, केवल देवपद का मूल अर्थ—द्योतक अर्थात् प्रकाशस्वरूप है; और वेदमंत्रों की भी देवसंज्ञा है, क्योंकि उनके कारण विद्याओं का द्योतन अर्थात् प्रकाश होता है, यज्ञ कर्मकांड का विषय है, यज्ञ में अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेधपर्यंत का समावेश होता है, देव शब्द का अर्थ परमात्मा भी है, क्योंकि उसने वेद का अर्थात् ज्ञान का और सूर्यादि जड़ों का प्रकाश किया है, देव अर्थात् विद्वान् ऐसा भी अर्थ होता है, क्योंकि शतपथब्राह्मण नामक ग्रंथ में "विद्वाꣳसो हि देवाः" ऐसा वर्णन किया है, पूजा शब्द का अर्थ सत्कार है।

पितृभिर्भ्रा० पूजितोऽतिथि० ॥पूजितोगुरुः॥ इत्यादि ॥

अब देव की पूजा कहने से परमात्मा का सत्कार करना—यह अर्थ होता है, चेतन पदार्थों ही का केवल सत्कार संभावित है, जड़ पदार्थों का अर्थात् मूर्तियों का सत्कार नहीं संभव होता, मुख्यत्व से वेदमंत्र के पठन से ईश्वर का सत्कार होता है इसलिए प्राचीन आर्य लोगों ने होम के स्थल में मंत्रों की योजना की है, इसी तरह यज्ञशाला को देवायतन अथवा देवालय कहा है।

तस्मात् सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥ म०भा

इसीलिए ब्रह्मयज्ञ अर्थात् वेदाध्ययन भी पाँच महायज्ञों में से एक है।

स्वाध्यायेनार्च्चयेतर्षीन् होमैर्देवान्यथाविधि ॥ मनुः

इस कथन से अर्वाचीन देवालय अर्थात् मंदिरों को कोई न समझे, देवालय का अर्थ तो यज्ञशाला ही है,

अब दूसरा अर्थ—संगतिकरण—अर्थात् अत्यंत प्रीतिपूर्वक, प्रेमपूर्वक, देवता का ध्यान, देवता का विचार तथा सत्पुरुषों का संग करना इसे भी यज्ञ ही कहते हैं।

अब तीसरा अर्थ दान है—विद्यादान को छोड़ दूसरे दान, दान नहीं हैं, केवल विद्या का दान ही दान है, अन्न वस्त्रादिकों के दान विद्यादान की सहायता करते हैं इसलिए उन्हें भी दान कहना उचित है, विद्यादान अक्षय दान है।

अब यज्ञ से क्या-क्या फल होते हैं इसका विचार करें,

यज्ञ का रूढ्यर्थ वेदों में काष्ठ घृतादिकों का दहन करना है, तो इसमें ऐसी शङ्का उत्पन्न होती है कि व्यर्थ ही काष्ठादि तथा घृतादि द्रव्यों को अग्नि में क्यों जलावें, इसका समाधान यह है कि—

शतपथब्राह्मण में कहा है—

जनतायै यज्ञो भवतीति ॥ शतपथब्राह्मण

पुष्टि, वर्धन, सुगंधप्रसार और नैरोग्य ये चार उपयोग होम अर्थात् हवन करने से होते हैं, ये लाभ उपदिष्ट रीति से होम होने पर ही होते हैं, कहा है

कि—

संस्कृतं हविः। होतव्यमिति शेषः।

शतपथब्राह्मण

योग्यरीति से यथाविधि होम करना चाहिए। एकदम मन भर घी जला दिया वा चम्मच-चम्मच करके मन भर घृत को बरस भर जलाते रहे तो भी होम नहीं होगा—फिर कोई-कोई कहते हैं कि होम अर्थात् देवतोद्देशक त्याग है, देवता लोग यजनदेश में आकर सुगंधि लेते हैं इसलिए होम करना चाहिए तो यह कहना अप्रशस्त है।

क्या देवलोक में कुछ सुगंधि की न्यूनता है जो वे हमारे क्षुद्र हविर्द्रव्य की अपेक्षा करते हैं ?

इसी तरह कोई-कोई कहते हैं कि श्राद्धादिकों में पितृलोग आते हैं और यदि उन्हें श्राद्धान्न और तर्पण का जल न मिले तो वे तृषार्त रहते हैं, तो क्या वे प्यासे रहकर भूखों मरेंगे ? और क्या पितृलोक में सब दरिद्रता ही दरिद्रता है ? सारांश यह कि सब समझ और विचार ठीक नहीं है क्योंकि देवलोक में वा पितृलोक में कुछ न्यूनता नहीं है, होम-हवन उनके उद्देश्य से कर्तव्य नहीं है किंतु सुवृष्टि और वायुशुद्धि होम हवनादि से होती है इसलिए होम करना चाहिए, क्योंकि सब प्रकार के नैरोग्य और बुद्धिवैशद्य को वायु और जल का ही आधार है, इसमें दृष्टांत सुनो कि—इन दिनों पंढरपुर में (हिंदू लोगों का एक यात्रा का स्थान है) बड़ा हैज़ा (विशूचिका) जारी है तो वहाँ का जलवायु ही बिगड़ने से इस बात का कारण हुआ। हरिद्वार में एक समय मेला हुआ था। वहाँ पर वायु बिगड़ने से हज़ारों मनुष्य कालवश हुए अर्थात् मर गए, ब्रह्मांड में संचार करनेवाला जो वायु है वही जीव का हेतु है, अंतरवायु द्वारा ठीक-ठीक व्यापार होवें इसलिए बाहर का ब्रह्मांडवायु शुद्ध रहना चाहिए। ब्रह्मांडवायु शुद्ध करने के लिए यज्ञकुंड में घृत, कस्तूरी, केशरादि सुगंधित, पुष्टिकारक द्रव्यों का हवन करना चाहिए, सुगंधित द्रव्यों के दहन से ब्रह्मांडवायु की दुर्गंधि का नाश होता है, इस हवन के कारण जो सुगंधि उत्पन्न होती है उस सुगंधि के सन्मुख वायु के सब दुष्ट दोष दूर होकर नैरोग्य उत्पन्न होता है, अब कोई अर्वाचीन लोग ऐसी शङ्का करें कि पदार्थों का दहन होने से

उनका पृथक्करण होकर उनके गुण नष्ट हो जाते हैं तब फिर हवन से नैरोग्य कैसे उत्पन्न होगा ? इस विषय में हमारा प्रथम उत्तर यह है कि सब द्रव्यों में स्वाभाविक और संयोगजन्य दो प्रकार के गुण है। उनमें स्वाभाविक गुणों का नाश कभी नहीं होता। संयोगजन्य गुणों के वियोग से ह्रास (घटती) होता है यदि स्वाभाविक गुण पदार्थों में न माने जाएँ तो समुदाय में गुण कहाँ से आवेगा ?

दृष्टांत : एक तिल्ली के दाने से थोड़ा ही तेल निकलता है इसलिए समुदायस्थित बहुत से तिलों का तेल बहुत निकलता है, एक जलपरमाणु में शीतता है इसलिए परमाणुसमुदायरूप जल का शीतता स्वाभाविक धर्म है, सुगंधित पदार्थों का सुगंधि स्वाभाविक गुण है वह दहन से फैलता है, उसका नाश नहीं होता।

द्वितीय : सुगंधि जलाने से दुर्गंधि का नाश होता है यह प्रत्यक्ष है।

तृतीय : जब हम अर्क निकालते हैं तब जैसा द्रव्य होता है वैसा ही तद्गुणविशिष्ट अर्क निकलता है अब अर्क अर्थात् अस्वादि अतर आदि द्रव्य हैं,

अग्नि परमाणु में जो गुण हैं, वे अग्नि के परमाणु अत्यंत सूक्ष्म होकर मेघमंडल तक विस्तीर्ण होते हैं और उससे वायुशुद्धि परिणाम होता है।

अब कोई ऐसी शङ्का करें कि होम एक छोटी सी कृति है इससे ब्रह्मांडवायु कैसे शुद्ध होगा, समुद्र में एक चम्मच भर कस्तूरी डालने से क्या सारा समुद्र सुगंधित और शुद्ध होगा ?

इसका समाधान यह है कि सौ घड़े रायते में थोड़ी सी ही बघार से रुचि आ जाती है यह प्रत्यक्ष है, इसकी जैसी उपपत्ति समझी जाती है तद्वत् ही यह प्रकार भी है, कोई ऐसी शङ्का करें कि होम तो यहाँ करो और अमेरिका में उसका परिणाम कैसे होगा ?

इसका समाधान यह है कि वायु द्वारा शुद्धि सर्वत्र फैले—यह वायु का धर्म है, सिवाय—यदि सब लोग अपने-अपने घर में आर्यसम्मत रीति से हवन करें तो यह शङ्का ही नहीं संभव होती। पहले आर्य लोगों का ऐसा सामाजिक नियम था कि प्रत्येक पुरुष प्रातःकाल स्नान कर बारह आहुति देता था क्योंकि प्रातःकाल में जो मलमूत्रादिकों की दुर्गंधि उत्पन्न होती थी वह इस

प्रातःकाल के हवन से दूर होती थी। इसी तरह सायंकाल में हवन करने से दिन भर की जमी हुई जो दुर्गंधि—उसका नाश होकर रात भर वायु निर्मल और शुद्ध चलती थी, प्राचीन आर्यलोग बड़े ही युक्तिमान् थे इसमें किंचित् भी संदेह नहीं है, फिर भी अमावास्या और पौर्णमासी के दिन समस्त भरतखंड में होम होता था उससे भरतखंड में वायुशुद्धि के कितने साधन उत्पन्न होते थे इसका विचार करने से यह छोटा ही सा प्रकार है ऐसा किसी को भी प्रतीत न होगा, अब वायु शुद्ध रहने से वृष्टि का जल भी शुद्ध रहता है, वृष्टि से और वायु से बड़ा ही घनिष्ठ संबंध रहता है और सब देश का जल वृष्टि से उत्पन्न होता है।

जल स्वच्छ और वायु के भी स्वच्छ रहने से वृक्षों के फल, पुष्प, रस ये बड़े ही शुद्ध और पुष्टिकारक होते हैं, उसी तरह अन्नादि सब द्रव्य शुद्ध और पुष्टिकारक होते हैं इसीलिए शरीर को सुख होकर अन्न से बल उत्पन्न होता है, प्राचीन आर्य लोगों के शौर्य का वर्णन इस प्रसंग में करने की कोई आवश्यकता नहीं है, वायु और जल की दुर्गंधि नष्ट होकर उनमें शुद्धि और पुष्टिवर्धनादि गुण बढ़ने से सब चराचरों को सुख होता है। इसीलिए कहा है कि—

स्वर्गकामो यजेत । सुखकाम इति शेषः।

ऐतरेय० शतपथब्राह्मण

होम—हवन से परमेश्वर की सेवा कैसे होती है, ऐसा यदि कोई कहे तो उसे विचार करना चाहिए कि—सेवा का अर्थ प्रिय आचरण है, परमेश्वर की सेवा अर्थात् उसको जो प्रिय वह आचरण करने से वह न्यायकारी होने के कारण उसके द्वारा योग्य प्रत्युपकार होता है ऐसा एक नियम ही है, अब स्वर्ग अर्थात् सुखविशेष अथवा विद्या, और नरक अर्थात् दुःखविशेष अथवा अविद्या है, विद्या स्वर्गप्राप्ति का तथा बुद्धिवर्धन का कारण है, बुद्धिवर्धन को शारीरिक दृढ़ता अवश्य चाहिए, और शुद्धवायु, शुद्धजल और शुद्धान्न के बिना शरीरदृढ़ता कैसे प्राप्त होगी ? **होम**—हवन से वायु शुद्ध होकर सुवृष्टि होती है, उससे शरीर नीरोग और बुद्धि विशद होती है, विद्या प्राप्त होती है अर्थात् स्वर्ग प्राप्ति, सुख प्राप्ति होती है।

कोई-कोई ऐसी भी शङ्का करें कि वायुशुद्ध्यर्थ यदि हवन है तो उसमें वेदमंत्रों के पठन की क्या आवश्यकता है और होम करने में अमुक ही रीति की ईंटें रहकर अमुक ही प्रकार की वेदी बनावे ऐसी विशेष योजना किस वास्ते चाहिए ?

इस शङ्का का समाधान यह है कि विशेष योजना के अनुकूल कोई भी बात किए बिना उससे विशेष कार्य नियमित समय पर प्राप्त नहीं होता, इसी तरह कच्ची ईंटों की चार अंगुल गहरी और सोलह अंगुल ऊँची गणित-प्रमाण से वेदी बनाकर उसमें नियमित प्रमाण का ही मसाला लेकर प्रमाण से घृतादिक का हवन करने से, अल्प व्यय में अतिशय उष्णता उत्पन्न होती है, और उष्णता के कारण वायु शुद्ध होकर जलपरमाणु वायु में उड़ जाते हैं और इस उष्णता के कारण वायु का घर्षण होकर विद्युत् उत्पन्न होती है, और मेघमंडल में गड़गड़ाहट की आवाज़ उत्पन्न होती है, इस प्रकार हवन की विशेष योजना के कारण विशेष उष्णता उत्पन्न होकर त्रिशेष वृष्टि उत्पन्न होती है।

अब गड़गड़ाहट अर्थात् इंद्रवज्र संघातजन्य शब्द वर्णन किया हुआ है, इसका सच्चा अर्थ यह है कि, इंद्र अर्थात् सूर्य और सूर्य की उष्णता के कारण विद्युत् और मेघगर्जनादि कार्य होते हैं।

कोई-कोई कहते हैं कि इंद्र अपने वज्र से बलि को मारता है सो वह बात बिलकुल झूठ है, बलि राजा पाताल में राज्य करता है, और पाताल अमेरिका देश है, सो अब उस अमेरिका में बलि राजा कहाँ पर है ? इसी तरह वेदी की एकाद ईंट यदि टेढ़ी बैठी कि मानो यजमान मरता है इत्यादि कहना भी अप्रशस्त और निर्मूल है, यह सब लीला अर्वाचीन लोगों के मतलब सिंधु की है, वे कहते हैं कि हम जो कहें उसे बछिया के बाबा की नाईं सुनो, शङ्का मत करो, शङ्का करते ही तुम नास्तिक बन जाओगे इत्यादि धमकियाँ धूर्त लोग देते रहते हैं।

अब—होम समय में वेदपठन किसलिए है यह पूछा था सो इसका उत्तर यह है कि दो काम यदि एक ही समय में हो सकते हों तो उन्हें करना चाहिए ऐसा उद्देश्य कर-कर प्राचीन आर्य लोगों ने हाथों को होमादिक द्रव्यों की व्यवस्था करने में लगाए तब मुँह खाली न रहे, परमेश्वर की स्तुति-प्रार्थना मुँह

से होती रहे इसलिए पहले के ऋषि लोग वेदमंत्र कहते थे, और ब्राह्मण लोगों ने कंठस्थ वेद आज तक किया इसीलिए वेदविद्या भी अबलों बनी रही है। फिर यह भी था कि वेदपाठ करने से परमेश्वर की भक्ति होती थी, जिससे विचारशक्ति भी उत्पन्न होती थी।

त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रं हवेहवे ॥ ऋ०सं०

दूसरा ऐसा भी विचार है कि जो हाथों से प्रयोग होता है उसके जो मंत्र उस समय कहे जाते हैं उनसे कुछ भी संबंध नहीं रहता इससे मंत्रोच्चार कर्म के उद्देश्य से नहीं होता किंतु परमेश्वर की स्तुति मुँह से होती रहे यही प्रधान उद्देश्य है और कोई-कोई मंत्र ऐसे भी हैं जिनमें होम के लाभ कहे गए हैं सारांश यह कि वेदमंत्रों को कहने से वेद की रक्षा ही मुख्य प्रयोजन है।

इस प्रकार कर्मकांड बिलकुल निष्फल नहीं है अस्तु,

कोई-कोई ऐसी शङ्का करेंगे कि वेदों में बीभत्स कथाएँ क्यों हैं ?

उत्तर—वेदों में तो बीभत्स कथाएँ कहीं भी नहीं हैं, ऐसी-ऐसी कथाएँ अर्वाचीन महीधरादि भाष्यकार दिखलाते हैं, सो यह दोष वेद पर नहीं लग सकता, यह केवल भाष्यकार की बीभत्स बुद्धि का दोष है, दृष्टांत—जैसे किसी सुवासिनी स्त्री ने किसी विधवा को नमन किया तो विधवा क्या कहती है अर्थात् आशीर्वाद देती है कि "आओ बहिना मुझसी हो" बस इसी प्रकार मतलबी लोगों ने मनमाना अर्थ वेदों में निकाला है—शतपथब्राह्मण को देखो।

श्रीर्वा राज्यस्याग्रमित्यादि ॥ (शत०ब्राह्मण)

अब कोई ऐसा कहे कि अश्वमेध में घोड़े के शिश्न का संस्कार यजमान की स्त्री के संबंध से कहा है, इससे ऐसा प्रकार वेदों में बिलकुल ही उपदिष्ट नहीं है, सो ठीक है परंतु इसके संबंध से जो-जो बीभत्स कथाएँ लिखी हैं उन्हें पढ़ते हुए मानो उलटी आती है, तथापि ऐसा बीभत्सपना कभी भी प्रचार में न आया हो यह कहते नहीं बनता क्योंकि पद्धतिनिरूपक ग्रंथों में यह बात स्पष्ट-स्पष्ट मिलती है।

पच्चीस सौ वर्ष के पूर्व बौद्ध लोगों ने जो-जो ग्रंथ बनाए उनमें ऐसी-

ऐसी बातों का उद्देश्य कर-कर ब्राह्मणों की निंदा की है।

अब कोई ऐसी शङ्का करें कि अस्तु जो हो परंतु बीभत्स कथाएँ तो भी उनमें हैं वा नहीं ?

अश्व को फेरते थे, और सार्वभौम राजा लोग इससे क्या शत्रुता उत्पन्न करते थे ?

इसमें हमारा समाधान यह है कि शतपथ में लिखा है कि—

अग्निर्वा अश्वः। आज्यं मेधः ॥ शतपथ ब्राह्मण

अश्वमेध अर्थात् अग्नि में घी डालना—इतना ही अर्थ है, उसी तरह ग्रंथसाहचर्य की ओर ध्यान देने से हरिश्चंद्र, शुनशेफ इत्यादि बातों का निर्वाह होता है।

अब केनोपनिषद् में एक यक्ष की वार्ता है, यक्ष ने अग्नि के सन्मुख तृण डाला, और अग्नि से कहा कि इस तिनके को तू जला दे, अग्नि से वह तिनका न जल सका, फिर वायु से कहा कि तू इस तिनके को उड़ा ले जा, वायु से भी वह तिनका न उड़ सका, ऐसा कहकर जो हैमवति नामक ब्रह्मविद्या है उसका माहात्म्य दर्शाया है, यज्ञ में मांस आदि खाना यह गपोड़ा अर्वाचीन पंडितों ने निकाला है।

कोई-कोई व्यभिचार के विषय में भी ऐसी ही कोटियाँ निकालते हैं, कहते हैं कि क्या इंद्र के पास मेनकादि अप्सराएँ नहीं हैं ? हम नगद रुपिया दे बाज़ार में कोई माल मोल लेवें तो इसमें दोष क्या है ? तो भाई सोचो कि ये बातें कहना क्या तुम्हें प्रशस्त दीखती हैं ? कभी नहीं।

अस्तु, पुरुषमेध का अब थोड़ा-सा विचार करें, यजुर्वेद के इस मंत्र को देखो—

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद्भद्रं तन्न आसुव ॥ य० सं०

होम तो देवताओं का हो और मांस पशुओं का तथा मनुष्यों का रक्खें तो कहो यह व्यवस्था कैसे ठीक-ठीक है ? ऐसी व्यवस्था परमेश्वर बनावेगा यह हमें तो निश्चय नहीं होता, अर्थात् ऐसी व्यवस्था को अन्याय के सिवाय

क्या कह सकते हैं ?

परमेश्वर की व्यवस्था में ऐसा अन्याय नहीं है, और ऐसी निष्कारण हानि का बर्ताव भी नहीं है, देखो गौ सदृश परोपकारी गरीब पशु को खाने के लिए वा यज्ञ के लिए मारने से कितनी हानि होती है—एक गाय चार सेर दूध देती है, इस दूध को औंटकर खीर (क्षीर) पकाने से न्यून से न्यून निदान चार मनुष्यों के लिए तो भी पौष्टिक अन्न होता है, अर्थात् प्रातःकाल-सायङ्काल दोनों समय का दूध मिलाकर आठ मनुष्यों का पोषण होता है, यदि उस गाय ने दस महीने दूध दिया तो समझ लो कि चौबीस सौ (2400) मनुष्यों का पालन उस गाय के एक बेत में होगा, इस प्रकार आठ औलाद औसत पकड़े तो 19200 (उन्नीस हजार दो सौ) लोगों का पालन होगा, वही गाय कोई यदि मारकर खा जाय तो पच्चीस-तीस मनुष्यों का पालन एक टंक का होता है इस प्रकार युक्ति की रीति से भी मांसभक्षण ठीक नहीं है।

अस्तु, इन दिनों मांसाहारियों ने राज्यबल के आधार से इतना जबर हाथ फेरना प्रारंभ किया है कि, चौपाए बिलकुल न्यून होते जाते हैं, पाँच रुपए के बैल के आजकल पच्चीस रुपए लगने लगे हैं, और गरीब लोगों को दुग्ध-घृत मिलने में बड़ी ही कठिनाई होती जाती है, जिस देश में बिलकुल मांस नहीं खाते उस देश में दूध-घी की खूब ही बहुतायत हो रही है अर्थात् वहाँ पर खूब समृद्धि रहती है।

अस्तु, अब लों तो पशुवध होम में न करने के लिए युक्तियों का तथा शास्त्र का विचार किया, अब इस शङ्का का विचार करें कि अथवा कभी होम में पशु को मारते थे वा नहीं ?

होम दो प्रकार के हैं, एक राजधर्म संबंधी और दूसरा सामाजिक, इतने समय तक सामाजिक होम का निरूपण किया, अब राजधर्म संबंधी जो होम है उसकी सब ही व्यवस्था भिन्न है, उसमें पशु मारने की तो क्या ही बात है परंतु कभी-कभी मनुष्यों को भी मारना पड़ता है, युद्धप्रसङ्ग में हज़ारों मनुष्यों का प्राण लेना यह राजधर्म विहित है, भयङ्कर श्वापदादि जो खेती को उजाड़ते हैं वा मनुष्यादि को हानि पहुँचाते हैं उनको मारना ठीक ही है क्योंकि जंगली पशुओं का विध्वंस करना अत्यावश्यक है, परंतु सब ही होमों में मांसाहार लाना यह सर्वथैव अयोग्य है, किसी प्राणी को पीड़ा देना—कहीं यह

धर्मविहित कैसे होगा, और इतने पर भी बेचारों का मुँह बाँधकर घूँसे मार-मारकर उनका जीव लेना तो ईश्वरप्रणीत व्यवहार कभी भी न होगा।

अब यज्ञ के विषय में किसका अधिकार है ऐसी कोई शङ्का करे तो जानना चाहिए कि कर्मकांड में जिनकी प्रवृत्ति है उन्हीं को केवल अधिकार है, कर्म से विचारशक्ति थोड़ी-थोड़ी जागृत होती है, उपासना से विचार में निर्मलता उत्पन्न होती है, फिर ज्ञान में विचार, दृढ़ता और पक्वता आकर फिर वह ज्ञानमार्ग का अधिकारी होता है।

अब हम होम के विषय में छोटी-छोटी शङ्काओं का विचार करते हैं।

कोई-कोई कहते हैं कि जब राजनियम से इन दिनों ग्राम स्वच्छ रहता है तो फिर होम किसलिए करें ? उनके प्रति हमारा यह उत्तर है कि हमारे घर स्वच्छ बनाए बिना ग्राम कैसे स्वच्छ रहेगा ? और ग्राम के बाहर की दुर्गंधि कैसे दूर होगी ? दूसरी शङ्का यह करते हैं कि जब आगगाड़ी में (रेल के इंजन में) और रसोई के घर में तो धुआँ (धूम्र) बहुत उत्पन्न होता है फिर वृष्टि भी बहुत होना ही चाहिए, तो फिर होम किस वास्ते करना चाहिए ?

इस पर हमारा यह कहना है कि यह धूम्र दुर्गंध और दूषित रहता है इससे वायु शुद्ध नहीं होता।

इन दिनों होम के न्यून होने से बारंबार वायु बिगड़ रही है, सदा विलक्षण रोग उत्पन्न होते जाते हैं।

अब तक यज्ञ का विचार हुआ अब थोड़ा सा संस्कारों का भी विचार करें।

2 भाग—संस्कार

संस्कार कहते किसे हैं ? इस प्रश्न का प्रथम विचार करना चाहिए।

किसी द्रव्य को उत्तम स्थिति में लाना इसका नाम संस्कार है, इस प्रकार का स्थित्यंतर मानवीय प्राणियों पर होवे एत र्थ आर्य लोगों ने सोलह संस्कारों की योजना की है, परंतु उन प्राचीन आया की इससे यह इच्छा न थी कि संस्कारों के कारण पेटार्थू पत्रापांडे हमारा माल उड़ावें और आलसी बनें क्योंकि वे आचार्य आर्य महाजन थे तो फिर वे—अनार्य अर्थात् अनाड़ियों

की समझ में क्योंकर मदद देते।

निषेक अर्थात् ऋतुप्रदान यह प्रथम संस्कार है, पिता निषेक करता है इसलिए पिता ही मुख्य गुरु है।

निषेकादीनि कर्माणि यः करोति यथाविधि।
सम्भावयति चान्येन स विप्रो गुरुरुच्यते ॥1॥ मनुः

ऐसा मनु में वाक्य है, पिता ही को सब उपदेश और संस्कार करने चाहिए, पुत्रेष्टि का वर्णन छान्दोग्यउपनिषद् में किया है उस स्थल पर गर्भ-धारण करने वाली स्त्रियों को क्या-क्या पदार्थ खाने चाहिए जिससे पुत्र के शरीर और बुद्धि में दृढ़ता आती है यह मुख्यकर विचार किया है, प्राचीनकाल के आर्य लोग केवल अमोघवीर्य थे, और स्त्रियों में भी पूर्णवय होने के कारण वीर्याकर्षता रहती थी, पुत्रेष्टि—यह गृहस्थाश्रम का प्रथम धर्म है।

2. पुंसवन—इस संस्कार का प्रयोजन वीर्य को पुनः शरीर में किस प्रकार जमावे इस योजना के संबंध से है, वीर्य में सदा स्थिरता, दृढ़ता और नैरोग्य गुण रहने चाहिए, अन्यथा विकृत वीर्य से संतति में नाना प्रकार के विकार उत्पन्न होते हैं, एतदर्थ सूत्रकारों ने ओषधियाँ बतलाई हैं, वीर्यवृद्ध्यर्थ और शांत्यर्थ वर्षभर (साल भर तक) पुरुषों को ब्रह्मचर्य रखना चाहिए ऐसा भी निर्बंध कहा हुआ है।

3. सीमंतोन्नयन्—स्त्रियों को अकाल में गर्भपात होने की बड़ी भीति रहती है सो वह न हो, और निरोगी, पुष्ट पदार्थों के सेवन से और मन के उत्साह रहने से, गर्भ की स्थिति उत्तम रहे एतदर्थ इस संस्कार की योजना है।

4. जातकर्म—इस संस्कार के विषय में विशेष होम करना कहा है, कारण कि सूतिकागृह का (जच्चा के घर का) अमंगलपना दूर करने के लिए सुगंधिवर्धक होम करना योग्य है, बच्चे को नाभि काटने से दुःख न हो, जच्चा सुखी रहे, इस प्रकार इस संस्कार का उद्देश्य है।

5. नामकरण—नाम रखने में भी कोई भूल न करे यहाँ तक प्राचीन आर्य लोगों की बारीक दृष्टि थी, नाम का सुख से उच्चारण हो, उसमें मधुरता रहे, इसलिए दो अक्षरवाला वा चार अक्षरवाला नाम होवे ऐसा कहा है, यूँ ही व्यर्थ लंबा-चौड़ा नाम न होवे, नहीं तो कभी-कभी इन दिनों लोग मथुरादास,

गोपवृंद, सेबकदास ऐसे लंबे-चौड़े नाम रखकर गड़बड़ मचाते हैं, कभी-कभी कौड़ीमल, वा भिकारीमल, धोंड्या पथया आदि विलक्षण नाम रखते हैं। इन दिनों सब प्रकार पागलपना फैल रहा है फिर नाम रखने में दोष हो तो आश्चर्य क्या है ? दोष देने में कुछ भी उपयोग नहीं, स्त्रियों के नामों में भी मधुरपना होना चाहिए जैसे भामा, अनसूया, सीता, लोपामुद्रा, यशोदा, सुखदा ऐसे-ऐसे प्राचीन आर्य लोगों की स्त्रियों के नाम होते थे।

6. निष्क्रमण—कोमल शरीर के बच्चों को बाहर हवा खाने के लिए ले जाना यही इस संस्कार का मुख्य उद्देश्य है।

7. अन्नप्राशन—योग्य समय में बच्चे को अन्नप्राशनादि यदि प्रारंभ न करें तो बड़ा ही दुःख होता है। इसलिए इस संस्कार की योजना है।

8. चूड़ाकर्म—मस्तक में उष्णता उत्पन्न न हो और उष्ण वायु में पसीने आदि के कारण मैल जमता है वह दूर होवे इसलिए इस संस्कार की योजना की है।

9. व्रतबंध—(यज्ञोपवीत) पुरुषों को विद्यारंभ के समय उत्साह हो इस उद्देश्य से व्रतबंध विषय में विशेष नियम ठहराए हैं अर्थात् बनाए हैं, स्त्रियों को भी विद्या-संपादन का अधिकार पहिले था, और उसके अनुकूल उनका भी व्रतबंध संस्कार पूर्व में करते थे, विद्वान् अर्थात् ब्राह्मण लोग, आर्यकुलोत्पन्न बालक को विद्यारंभ के समय कार्पास का अर्थात् रुई का यज्ञोपवीत विशेष चिह्न जान धारण करने को देते थे, इसके धारण करने में बड़ी ही जवाबदारी रहती थी, क्षत्रिय वैश्यादिकों के बालकों को भी कार्पास का तो नहीं किंतु दूसरे पदार्थों का यज्ञोपवीत धारण करने के लिए देते थे, यदि ठीक-ठीक विद्या संपादन न हुई तो चाहे ब्राह्मण ही कुल में उत्पन्न हुआ हो तो भी उसका यज्ञोपवीत छीना जाता और उसकी अप्रतिष्ठा होती, उसी तरह शूद्रादिक भी उत्तम विद्या संपादन कर-कर ब्राह्मणत्व के अधिकारी होकर यज्ञोपवीत धारण करते थे, इस प्रकार की व्यवस्था प्राचीन आर्य लोगों ने कर रक्खी थी इस कारण सब जाति के पुरुषों को और स्त्रियों को विद्या-संपादन करने के विषय में उत्साह बढ़ता रहता, विद्या के अधिकारानुसार उत्तम, मध्यम, कनिष्ठ ऐसे यज्ञोपवीत के भूषण सबों को धारण करने को मिलते रहते थे।

10. तदनंतर **वेदारंभ** और ग्यारहवाँ **वेदाध्ययन** समाप्ति अर्थात् समावर्तन ऐसे दो संस्कार हैं।

12. विवाह—इस संस्कार का—आगे जब इतिहास विषय में व्याख्यान देंगे उस समय विचार करेंगे, इन दिनों मुहूर्तादिक के विषय में जो आडंबर मचा रक्खा है यह केवल बलात्कार (ज़बरदस्ती) है।

व्यर्थ ही कालक्षेप न हो और नियमित समय पर सब वार्ता हो इसलिए कालनियम के विषय में ध्यान देना अत्यावश्यक है, परंतु उसी के शास्त्रार्थ में व्यर्थ टाँय-टाँय करना अनुचित है, इसी प्रकार पहिले आर्य लोग स्वयंवर करते थे, एक नाड़ आई और मनुष्यगण आ घुसा और अमुक ग्रह नहीं मिला और फलानी राशि टेढ़ों हुई इत्यादि गपोड़े उन दिनों में नहीं थे।

13. गार्हपत्य—गृहस्थाश्रम में पंचमहायज्ञ करने पड़ते हैं इसका विचार भी आगे इतिहास विषय में व्याख्यान देते समय करेंगे।

14. वानप्रस्थ—पुत्र का बेटा होते ही गृहस्थाश्रम में वास करने वाला गृहस्थी वानप्रस्थाश्रम धारण करे ऐसी योजना थी, वानप्रस्थाश्रम में धर्माधर्म का और सत्यासत्य विषय में निर्णय होता रहता था, क्योंकि विचार के लिए समय मिले और गुण-दोष का निर्णय करने में आवे इसलिए वानप्रस्थाश्रम की योजना की है।

15. संन्यास—धर्म की प्रवृत्ति विशेष हो और जनहित करने में आवे इसलिए यह आश्रम है।

16. अंत्येष्टि—आश्वलायन सूत्र में इस संस्कार का वर्णन किया है, आजकल हमारे देश में अंत्येष्टि के तीन प्रकार जारी हैं। कोई तो जलाते हैं तो कोई जङ्गल में डाल आते हैं तो तीसरे जलसमाधि देते हैं।

प्राचीन आर्य लोगों में अंत्येष्टि यज्ञ है, उसमें दहनप्रकार मुख्य है। अब मुर्दे को गाड़नेवाले ऐसी शङ्का करें कि जलाना बड़ी निष्ठुरता है, परंतु मुसलमानादिकों को विचार करना चाहिए कि मुर्दे को ज़मीन में गाड़ने से रोग की उत्पत्ति होती है।

कोई-कोई ऐसी भी शङ्का करेगा कि जल में देह डालने से मच्छियाँ उसे खाती हैं तो क्या यह परोपकार नहीं है ? परंतु जल बिगड़ता है इसका भी तो विचार करना चाहिए। गंगासदृश महानदियों में प्रेतों को डालने से जल में

विकार उत्पन्न होता है तो फिर छोटी-मोटी नदियों की तो कथा क्या है, अब गंगा में हड्डियाँ ले जाकर बहुत से लोग डालते हैं तो बतलाओ यह कितना भारी भोलापन है ? मरे हुए प्राणी का देह मृत्तिका है, उसे गंगा में डालने से क्या लाभ होगा ? वन में फेंकने से भी दुर्गंधि उत्पन्न होकर रोग उत्पन्न होता है इसे कहने की कोई आवश्यकता नहीं है।

इससे प्राचीन आर्य लोगों ने दहनविधि ही को मुख्य माना है और यही ठीक है, वे श्मशान भूमि में एक वेदी बनाया करते और उसे पक्की ईंटों से बाँधते और फिर उसमें मृतदेह को जलाते समय बीस सेर घृत डालकर चंदनादि सुगंधित पदार्थ भी डालते थे, शुक्ल यजुर्वेद के 39वें अध्याय में इस विषय का वर्णन किया है।

आजकल अन्त्येष्टि संस्कार यथाविधि नहीं होता, नाममात्र होता, अलबत्ता कह्रहाओं की चैन उड़ती है, सो यह जबरदस्ती है। सबों को उचित है कि फिर संस्कारों को सुधारें, जिससे कल्याण हो, ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

दयानंद सरस्वती द्वारा रचित एवं प्रकाशित ग्रंथों का विवरण

क्र०	ग्रंथों के नाम	प्रकाशक	प्रकाशन संवत्
1.	संध्या	ज्वालाप्रकाश प्रेस, आगरा	1920 वि० / 1863 ई०
2.	भागवतखंडन अपर नाम पाखण्डखंडन	ज्वालाप्रकाश प्रेस, आगरा	1923 वि० / 1866 ई०
3.	अद्वैतमतखण्डन	लाइट प्रेस, बनारस	1927 वि० / 1870 ई०
4.	सत्यार्थप्रकाश (प्रथम संस्करण)	स्टार प्रेस, बनारस	1931 वि० / 1875 ई०
5.	सत्यार्थप्रकाश (द्वितीय संस्करण)	वैदिक यंत्रालंय, प्रयाग	1941 वि० / 1884 ई०
6.	संध्योपासनादि पञ्चमहायज्ञविधिः	आर्य प्रेस, बंबई	1931 वि० / 1796 शकाब्द
7.	पञ्चमहायज्ञविधिः (संशोधित)	लाजरस प्रेस, बंबई	1934 वि० / 1877 ई०
8.	वेदान्तिध्वान्तनिवारण	ओरियंटल प्रेस, बंबई	1932 वि० / 1876 ई०
9.	वेदविरुद्धमतखण्डन	निर्णयसागर प्रेस, बंबई	1931 वि० / 1875 ई०
10.	शिक्षापत्रीध्वान्तनिवारण	बंबई	1931 वि० / 1875 ई०
11.	आर्याभिविनयः	आर्यमण्डल प्रेस, बंबई	1932 वि० / 1876 ई०
12.	संस्कारविधिः	एशियाटिक प्रेस, बंबई	1933 वि० / 1877 ई०
13.	संस्कारविधिः (द्वितीय संस्करण)	वैदिक यंत्रालय, प्रयाग	1941 वि० / 1884 ई०
14.	वेदभाष्यम् (नमूने का अंक)	लाजरस प्रेस, बनारस	1933 वि० / 1876 ई०
15.	ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका	लाजरस प्रेस, बनारस	वैशाख 1934 वि० / 1935 वि० (1-14 खंड)
		निर्णयसागर प्रेस, बंबई	1935 वि० / 1878 ई० (15, 16 खंड)
16.	ऋग्वेद भाष्य (7 । 6 2 । 2 तक)	निर्णयसागर प्रेस, बंबई वैदिक यंत्रालय, काशी, प्रयाग, अजमेर	1935 वि० / 1877 ई० से 1956 वि० / 1899 ई० पर्यंत
17.	यजुर्वेद भाष्य	निर्णयसागर प्रेस, बंबई वैदिक यंत्रालय, काशी, प्रयाग	1935 वि० / 1878 ई० से 1946 वि० / 1889 ई० पर्यंत

क्र०	ग्रंथों के नाम	प्रकाशक	प्रकाशन संवत्
18.	आर्योद्देश्यरत्नमाला	चश्मएनूर प्रेस, अमृतसर	1934 वि० / 1877 ई०
19.	भ्रान्तिनिवारण	आर्यभूषण प्रेस, शाहजहाँपुर	1937 वि० / 1880 ई०
20.	अष्टाध्यायी भाष्य (2 भाग)	वैदिक यंत्रालय, अजमेर	लेखन-काल 1935-36 वि०
		प्रकाशनकाल : प्रथम भाग	1884 वि० / 1827 ई०
		द्वितीय भाग	1997 वि० / 1940 ई०
21.	संस्कृतवाक्यप्रबोधः	वैदिक यंत्रालय, काशी	1936 वि० / 1879 ई०
22.	व्यवहारभानु	वैदिक यंत्रालय, काशी	1936 वि० / 1879 ई०
23.	गौतम अहल्या की कथा	वैदिक यंत्रालय, काशी	1937 वि० / 1879 ई०
24.	भ्रमोच्छेदन	वैदिक यंत्रालय, काशी	1937 वि० / 1880 ई०
25.	गोकरुणानिधि	वैदिक यंत्रालय, काशी	1937 वि० / 1880 ई०
26.	वेदाङ्गप्रकाश (14 भाग)	वैदिक यंत्रालय, काशी,	1936 वि० / 1879 ई०
		प्रयाग	1940 वि० / 1883 ई०
27.	काशीशास्त्रार्थ	वैदिक यंत्रालय, काशी	1937 वि० / 1880 ई०
28.	हुगलीशास्त्रार्थ (प्रतिमापूजन विचार)	लाइट प्रेस, बनारस	1930 वि० / 1873 ई०
29.	सत्यधर्मविचार (मेला चाँदापुर)	वैदिक यंत्रालय, काशी	1937 वि० / 1880 ई०
30.	जालंधर शास्त्रार्थ	पंजाबी प्रेस, लाहौर	1934 वि० / 1877 ई०
31.	सत्यासत्यविवेक (बरेली शास्त्रार्थ)	आर्यभूषण प्रेस, शाहजहाँपुर	1936 वि० / 1879 ई० (उर्दू)
32.	चतुर्वेदविषयसूची	वैदिक यंत्रालय, अजमेर	2028 वि० / 1971 ई०

दयानंद सरस्वती के कुछ प्रसिद्ध शास्त्रार्थ का विवरण

क्र०	तिथि	स्थान	प्रतिवादी पण्डित/वक्ता	विषय
1.	1922 वि० / 1865 ई०	जयपुर	पं० हरिश्चंद्र, राजीवलोचन, ओझा आदि	व्याकरण
2.	ज्येष्ठ द्वितीय 1923 वि० / 1866 ई० (3 दिन तक)	अजमेर	रेवरेण्ड ग्रे, पादरी रॉबसन	ईश्वर, जीव, सृष्टि क्रम, वेद आदि
3.	आश्विन 1924 वि० / अक्टूबर, 1867 ई०	कर्णवास	पं० अम्बादत्त पर्वती	मूर्तिपूजा
4.	मार्गशीर्ष 1924 वि० / दिसंबर, 1867 ई०	रामघाट	स्वामी कृष्णानंद	अवतारवाद
5.	पौष कृष्णा 11, 1924 वि०/ पौष शुक्ला 1, 1924 वि० जनवरी, 1868 ई० (6 दिन तक)	कर्णवास	पं० हीरावल्लभ	मूर्तिपूजा
6.	चैत्र शुक्ल पक्ष 1925 वि० / अप्रैल, 1868 ई०	सोरों (शूकर क्षेत्र)	पं० अंगदराम शास्त्री	मूर्तिपूजा
7.	कार्तिक 1925 वि० / नवंबर, 1868 ई०	ककोड़ा	पं० उमादत्त	मूर्तिपूजा
8.	1926 वि० / 1869 ई०	फर्रुखाबाद	पं० श्रीगोपाल	मूर्तिपूजा
9.	ज्येष्ठ शुक्ला 10. 11. 1926 वि० 19, 20, जून, 1869 ई०	फर्रुखाबाद	पं० हलधर ओझा	मूर्तिपूजा
10.	आषाढ़ 1826 वि० / जुलाई, 1869 ई०	कन्नौज	पं० हरिशंकर शास्त्री	मूर्तिपूजा
11.	आषाढ़ 1826 वि० / 31 जुलाई, 1869 ई०	कानपुर	पं० हलधर ओझा, पं० लक्ष्मण शास्त्री	मूर्तिपूजा

क्र०	तिथि	स्थान	प्रतिवादी पण्डित/वक्ता	विषय
12.	कार्तिक शुक्ला 12, 1926 वि०/ 16 नवंबर, 1869 ई०	काशी	स्वामी विशुद्धानंद आदि 40 प्रमुख पण्डित	मूर्तिपूजा
13.	1926 वि० / 1870 ई०	मिर्जापुर	पं० गोविन्दभट्ट, पं० जयश्री	भागवत और मूर्तिपूजा
14.	1929 वि० / 1872 ई०	डुमराँव	पं० दुर्गादत्त	अद्वैतवाद, मूर्तिपूजा
15.	भाद्रपद 1929 वि० / अगस्त 1872 ई०	आरा	पं० रुद्रदत्त, पं० चंद्रदत्त	मूर्तिपूजा
16.	भाद्रपद शुक्ल पक्ष 1929 वि० / सितंबर, 1872 ई०	पटना	पं० रामजीवन भट्ट	मूर्तिपूजा
17.	चैत्र शुक्ला 11, 1930 वि० / 8 अप्रैल, 1873 ई०	हुगली	पं० ताराचरण तर्करत्न	प्रतिमापूजन
18.	ज्येष्ठ 1930 वि० / जून, 1873 ई०	छपरा	पं० जगन्नाथ	मूर्तिपूजा
19.	आषाढ़ 1930 वि० / जून, 1873 ई०	आरा	पं० रुद्रदत्त	मूर्तिपूजा
20.	मार्गशीर्ष अमावस्या 1930 वि०/ 11 नवंबर, 1873 ई०	लखनऊ	पं० गंगाधर शास्त्री	मूर्तिपूजा
21.	आषाढ़ 1931 वि० / जुलाई, 1874 ई०	प्रयाग	पं० नीलकंठ शास्त्री गोरें (धर्मान्तरित ईसाई)	वेद में देवतावाद
22.	मार्गशीर्ष 1931 वि० / दिसंबर, 1874 ई०	सूरत	पं० इच्छाशंकर शास्त्री	अद्वैतवाद
23.	मार्गशीर्ष 1931 वि० / दिसंबर, 1874 ई०	भड़ौंच	पं० माधवराव त्र्यम्बकराव	मूर्तिपूजा
24.	पौष 1931 वि० / जनवरी, 1875 ई०	राजकोट	पं० महीधर, पं० जीवनराम शास्त्री	मूर्तिपूजा और अवतारवाद

क्र०	तिथि	स्थान	प्रतिवादी पण्डित/वक्ता	विषय
25.	माघ कृष्णा 6, 1931 वि०/ 27 जनवरी, 1875 ई०	अहमदाबाद	पं० सेवकराम रामनाथ शास्त्री पं० लल्लूभाई बापूभाई शास्त्री पं० भोलानाथ भगवान आदि	मूर्तिपूजा और अवतारवाद
26.	फाल्गुन शुक्ला 5, 1931 वि०/ 10 मार्च, 1875 ई०	बंबई	पं० खेमजी बालजी जोशी पं० इच्छाशंकर शुक्ल	व्याकरण
27.	ज्येष्ठ 1932 वि० / 12 जून, 1875 ई०	बंबई	पं० कमलनयनाचार्य	मूर्तिपूजा
28.	पौष 1932 वि० / दिसंबर, 1875 ई०	बड़ौदा	पं० यज्ञेश्वर शास्त्री पं० अप्पय शास्त्री	व्याकरण और न्याय
29.	चैत्र 1932 वि० / 27 मार्च, 1876 ई०	बंबई	पं० रामलाल	मूर्तिपूजा
30.	ज्येष्ठ अमावस्या 1933 वि०/ 23 मई, 1876 ई०	फर्रुखाबाद	पादरी जे०जे० लूकस	मोक्ष
31.	मार्गशीर्ष 1933 वि० / नवंबर, 1876 ई०	बरेली	पं० लक्ष्मणशास्त्री	
32.	मार्गशीर्ष 1933 वि० / नवंबर, 1876 ई०	मुरादाबाद	ई०डब्ल्यू० पार्कर, पादरी बेली, देशी ईसाई रामचंद्र बोस	ईश्वर मुक्ति दाता ? सृष्टि उत्पत्ति
33.	फाल्गुन 1933 वि० / फरवरी, 1877 ई०	सहारनपुर	पं० बलदेव व्यास, साधु दीवानदास	
34.	चैत्र शुक्ला 4, 5, 1934 वि०/ वि०/ 19, 20 मार्च, 1877 ई०	चाँदापुर	मौलवी मोहम्मद कासिम पादरी डॉ० टी०जे० स्कॉट पादरी नोबिल	सृष्टि रचना का प्रयोजन तथा मुक्ति का स्वरूप
35.	श्रावण 1934 वि० / अगस्त, 1877 ई०	गुरदासपुर	पं० लक्ष्मीधर, पं० दौलतराम	मूर्तिपूजा
36.	आश्विन कृष्णा 1, 1934 वि०/ 24 सितंबर, 1877 ई०	जालंधर	मौलवी अहमदहसन	पुनर्जन्म और करामात

क्र०	तिथि	स्थान	प्रतिवादी पण्डित/वक्ता	विषय
37.	पौष 1934 वि० / जनवरी, 1878 ई०	जेहलम	शिवचरण घोष (ईसाई)	अज्ञात
38.	पौष 1934 वि० / जनवरी, 1878 ई०	गुजरात	जम्मू का एक पण्डित	अज्ञात
39.	माघ शुक्ला 1, 2, 1934 वि०/ 3, 4, फरवरी, 1878 ई०	वजीराबाद	पं० वासुदेव	मूर्तिपूजा
40.	फाल्गुन कृष्णा 2, 1934 वि० / 19 फरवरी, 1878 ई०	गुजराँवाला	पादरी सोलफीट (स्विफ्ट) तथा अन्य	क्या जीव और ईश्वर दोनों अनादि हैं ?
41.	मार्गशीर्ष शुक्ला 4, 1935 वि० / 28 नवंबर, 1878 ई०	अजमेर	पादरी ग्रे और डॉ० हसबैण्ड	बाइबिल वर्णित सृष्टि-उत्पत्ति
42.	भाद्रपद कृष्णा 2, 1936 वि० / अगस्त, 1879 ई०	बदायूँ	पं० रामप्रसाद, पं० वृंदावन, पं० टीकाराम	ईश्वर साकार है या निराकार
43.	भाद्रपद शुक्ला 7, 8, 9 1936 वि० / 25 26, 27, अगस्त, 1879 ई०	बरेली	डॉ० टी०जे० स्कॉट	1. आवागमन (पुनर्जन्म) का सिद्धांत। 2. ईश्वर देह धारण करता है या नहीं ? 3. ईश्वर अपराध क्षमा करता है या नहीं ?
44.	आश्विन कृष्ण पक्ष 1936 वि० / सितंबर, 1879 ई०	शाहजहाँपुर	पं० लक्ष्मण शास्त्री	मूर्तिपूजा
45.	श्रावण कृष्णा 2, 1938 वि० / 13 जुलाई, 1881 ई०	मसूदा (राजस्थान)	साधु सिद्धकरण	जैनमत विषयक
46.	भाद्रपद कृष्णा 14 से भाद्रपद शुक्ला 5, 1939 वि० / 11 सितंबर से 17 सितंबर, 1882 ई० तक	उदयपुर	मौलवी अब्दुलरहमान	7 विभिन्न प्रश्न

दयानंद सरस्वती को श्रद्धांजलियाँ

दयानंद सरस्वती के निधन पर निम्न पत्र-पत्रिकाओं ने इस दुखद समाचार को प्रकाशित कर उन्हें श्रद्धाञ्जलि अर्पित की–

पश्चिमोत्तर प्रदेश के पत्र

हिंदी प्रदीप मासिक, प्रयाग; भारतबंधु साप्ताहिक, अलीगढ़; शुभचिंतक मासिक, शाहजहाँपुर; बनारस गजट साप्ताहिक, बनारस; बदायूँ समाचार, हिंदुस्तानी, नसीमहिंद, बुंदेल केसरी, क्षत्रियहितकारी बनारस: अवध अखबार लखनऊ (उर्दू दैनिक–8 नवंबर, 1883)।

मध्यप्रदेश

बिलासपुर समाचार

पंजाब के पत्र

देशोपकारक, (उर्दू) लाहौर; ट्रिब्यून दैनिक, लाहौर (3 नवंबर, 1883); विक्टोरिया पेपर, स्यालकोट; पंजाब टाइम्स, रावलपिंडी (10 नवंबर, 1883); कोहिनूर, लाहौर; आफताब, पंजाब लाहौर; ज्ञानप्रदायिनीपत्रिका, लाहौर (नवीनचंद्र राय द्वारा संपादित); अंजुमन, लाहौर।

बंबई प्रदेश के पत्र

इण्डियन स्पीकर बंबई–संपादक बहरामजी मलाबारी (18 नवंबर, 1883); दैनिक समाचार, बंबई (2 नवंबर, 1883); सुबोधपत्रिका, बंबई; यजदानपरस्त, बंबई; सन्मार्ग दीपिका, बंबई; जामे जमशेद दैनिक, बंबई (2 नवंबर, 1883); रास्त गुफ्तार (सत्यवक्ता), बंबई (4 नवंबर, 1883); गुजरातमित्र, सूरत

(11 नवंबर, 1883) वर्तमानानुसार, सूरत; सूर्यप्रकाश, सूरत, विज्ञान विलास (गुजराती मासिक) राजकोट (दिसंबर, 1883); केसरी पूना (संपादक—बाल गंगाधर तिलक)।

मद्रास प्रदेश के पत्र

हिंदू ऑब्जर्वर, मद्रास (8 नवंबर, 1883); थिंकर, मद्रास (11 नवंबर, 1883); हिंदू, मद्रास।

बिहार व बंगाल के पत्र

बंगाली, कलकत्ता (3 नवंबर, 1883); सुरेन्द्रनाथ बनर्जी द्वारा संपादित, इंडियन एम्पायर, कलकत्ता (4 नवंबर, 1883); हिंदू पेट्रियट, कलकत्ता (8 नवंबर, 1883); इंडियन क्रानिकल, कलकत्ता; बंगाल पब्लिक ओपिनियन, कलकत्ता (8 नवंबर, 1883); लिबरल, कलकत्ता (11 नवंबर, 1883); इंडियन मैसेंजर, कलकत्ता (11 नवंबर, 1883); एज्यूकेशनगजट, कलकत्ता; बंगवासी, कलकत्ता; संजीवनी, कलकत्ता; इंग्लिश क्रानिकल, बाँकीपुर, पटना (5 नवंबर, 1883)।

आर्यसामाजिक पत्र

1. आर्यदर्पण मासिक, शाहजहाँपुर
2. आर्यसमाचार (उर्दू), मेरठ
3. भारतसुदशाप्रवर्तक मासिक, फर्रुखाबाद (अक्तूबर-नवंबर, 1883)
4. देशहितैषी, अजमेर
5. The Arya Magazine, लाहौर, नवंबर, 1883 आर०सी० बेरी द्वारा संपादित।
6. Regenerator of Aryavarta, लाहौर, पं० गुरुदत्त द्वारा संपादित।

□□

डा० राज बुद्धिराजा
22509603 - घर
9313912960
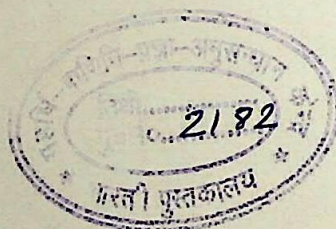
राज बुद्धिराजा

जन्म : 16 मार्च, 1937, लाहौर

मातृभाषा : पंजाबी

शिक्षा : एम०ए० (हिंदी), पुष्पसज्जा इकेबाना, पी-एच०डी०

भाषा-ज्ञान : संस्कृत, हिंदी, पंजाबी, गुजराती, जर्मन, जापानी

शिक्षण : 1967 से दिल्ली विश्वविद्यालय के कालिन्दी कॉलेज के अतिरिक्त तोक्यो, पेरिस, रोम और लंदन विश्वविद्यालय में अध्यापन • वर्णमाला से लेकर स्नातकोत्तर स्तर तक तीन हज़ार से अधिक विदेशी राजनयिकों को अध्यापन।

प्रकाशन : अट्ठाईस पुस्तकों का प्रकाशन, जिनमें 'देव के काव्य में अभिव्यक्ति-विधान', 'प्रश्नातीत', 'रेत का टीला', 'जापानी सीखें', 'जापानी-हिंदी शब्दकोश', 'दिल्ली : अतीत के झरोखे से', 'शंखनाद' और 'पारो खुश है' बहुचर्चित • तीन हज़ार आलेख और कविताएँ विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित।

पुरस्कार-सम्मान : राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कारों से अलंकृत • महिला-शिरोमणि, रत्न-शिरोमणि, भारतीय प्रतिष्ठा, राष्ट्रीय एकता, मीडिया अवार्ड, साहित्यकार सम्मान और यू०जी०सी० के पोस्ट डॉक्टोरल रिसर्च फेलोशिप से सम्मानित।

प्रशासनिक अनुभव : 1972 से 1981 तक इंचार्ज नॉन कॉलेजिएट वूमन्स एजुकेशन बोर्ड, दिल्ली विश्वविद्यालय।

संप्रति : कालिन्दी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय में अध्यापन • अध्यक्ष, भारत-जापान सांस्कृतिक परिषद्, जी-233, प्रीत विहार, दिल्ली-110092